- किसी भी पादप का रोमीय मूल संवर्धन inoculating thick bacterial suspension और सतह निर्जमीत पति डिस्क अथवा Plantlet के स्तंभ अथवा बीज अथवा स्तंभ खण्ड (हरे पादप से) द्वारा प्रारम्भ किया जा सकता है।

सुनहरा चावल (Golden Rice)

विटामिन A की कमी से बच्चे अंधे हो जाते हैं, और उनकी मौत भी हो सकती है। सामान्यतया, विटामिन A की कमी उन क्षेत्रों में पाई जाती है, जहाँ चावल प्रमुख भोजन होता है। इसका कारण यह है कि चावल में प्रोविटामिन A या B कैरोटीन नहीं होता है। इस दशा सुधार के लिये तीन पारजीनों का ऐग्रोबैक्टीरियम द्वारा धान में स्थानांतरण किया गया है।

ये तीन जीन निम्नलिखित हैं: (1) फाइटोईन सिंथेस (phytoene synthase), (2) फाइटोईन डिसेचुरेस (phytoene desaturase), एवं (3) लाइकोपीन साइक्लेस (lycopene cyclase)।

इन तीनों जीनों को अभिव्यक्त करने वाले विभेद (strain) के दानों में B-कैरोटीन की पर्याप्त मात्रा उपस्थित होती है, और **इस कारण इन चावलों का रंग सुनहरा होता है। इसीलिये इसे सुनहरा चावल कहते हैं।**

भोजन में लोहे की कमी विश्व की पोषण संबंधी एक प्रमुख समस्या है।

चावल में लोहे का अंश अपेक्षाकृत बहुत कम होता है, और इसमें फाइटेट (phytate) भी उपस्थित होता है। फाइटेट बीजों में फास्फोरस के भंडारण का काम करता है, और वह भोजन में उपस्थित लोहे की उपलब्धता को घटाता है। वैसे भी शाकाहारी भोजन से लोह अवशोषण (absorption) कम ही हो पाता है।

उच्च लौह अंश वाले धान के एक विभेद को निम्नलिखित तीन पारजीनों को स्थानांतरित करके प्राप्त किया गया है:
(1) फेरेटिन (ferretin) कोडित करने वाला जीन,
(2) मैटैलोथायनिन (metallothionein) जीन एवं
(3) तापस्थिर (heat stable) फाइटेस (phytase) कोडित करने वाला जीन।

इस उच्च लौह अंश विभेद का 'सुनहरे चावल' विभेद से संकरण करके एक 'उच्च लौह' उच्च प्रोविटामिन A' लाइन प्राप्त की गई है। इस लाइन से प्राप्त चावल के उपयोग से लोहे एवं विटामिन A की कमियों को समाप्त करने में सहायता मिलेगी।

वास्तव में, अब उपरोक्त सुनहरे चावल की तुलना में कई गुना अधिक B-कैरोटीन-युक्त 'सुनहरे चावल' के विभेद का विकास किया जा चुका है।

प्रति-अर्थक RNA टेक्नोलाजी (Antisense RNA Technology)

किसी भी जीन के अनुलेखित (transcribe) होने वाले रज्जुक का 3'-छोर उस जीन के प्रमोटर के साथ जुड़ा होता है। इस रज्जुक को प्रति-अर्थक रज्जुक (anti-sense strand) कहते हैं, और इसका क्षारक क्रम जीन द्वारा उत्पादित mRNA के क्षारक क्रम का पूरक होता है। इस जीन का दूसरा रज्जुक अर्थक रज्जुक (sense strand) कहा जाता है, क्योंकि इसका क्षारक क्रम ठीक वही होता है, जो mRNA का होता है।

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि जीन में mRNA के U के स्थान पर T होता है। इसके साथ ही, अर्थक रज्जुक में इंट्रान भी होंगे, जो mRNA में नहीं होते हैं। अतः उपरोक्त कथन जीन के एक्जान क्रमों (exon sequences) के लिए ही सही है। अब यदि किसी जीन के कोडन (coding) क्रम को लंबाई में 180° घुमा दिया जाय (अर्थात उसे प्रतिलोमित, invert, कर दिया जाय) तो इस जीन के अर्थक रज्जुक का 3'-छोर इसके प्रमोटर से जुड़ जाएगा।

अतः इस दिक्न्यास वाले जीन का अर्थक रज्जुक अनुलेखित होगा, और इस प्रकार प्राप्त RNA का क्रम ठीक वही होगा जो इस जीन के प्रति-अर्थक रज्जुक का है।

इस कारण, इस RNA को प्रति-अर्थक RNA, इस जीन रचना को प्रति-अर्थक जीन रचना, तथा इस प्रकार की जीन रचना के संयोजन को प्रति-अर्थक दिक्न्यास (orientation) कहते हैं।

जिस अंतर्जात (endogenous) जीन का दमन करना होता है (लक्ष्य जीन), उसकी प्रति-अर्थक जीन रचना तैयार करके पौधों के जिनोम में समाकलित करते हैं। ऐसे पारजीनी पौधों के प्रत्येक केंद्रक में लक्ष्य जीन की एक अर्थक तथा एक प्रति-अर्थक प्रतियाँ उपस्थित होंगी, जिनके अनुलेखन से क्रमशः अर्थक(sense) एवं प्रति-अर्थक RNA(antisense) प्राप्त होंगे। प्र

ति-अर्थक RNA अर्थक R (= mRNA) से क्षारक-युग्मन करेगा, जिससे द्विरज्जुकी (double-stranded) RNA अणु बनेंगे।
(1) इन RNA अणुओं में उपस्थित अर्थक RNA (=mRNA) का अनूदन (translation) नहीं हो सकेगा,
(2) इनको द्विरज्जुक RNA-विशिष्ट RNases अपघटित (degrade) करते हैं, जिससे
(3) लक्ष्य जीन के प्रमोटर एवं कोडन क्रमों का मेथिलीकरण (methylation) होता है, और
(4) इसके फलस्वरूप, इस जीन की अभिव्यक्ति कम/समाप्त हो जाती है।
इस घटनाक्रम को जीन निःस्वरण (gene silencing) कहते हैं।

प्रति-अर्थक RNA विधि के कुछ सफल उपयोग नीचे दिये गए हैं।

टमाटर का पालीगैलैक्टयूरोनेस (polygalacturonase: PG) एन्जाइम कोशिका भित्ति के एक प्रमुख घटक पेक्टिन (pectin) का पाचन करता है। इस कारण फल जल्दी ही नरम एवं पिल-पिले हो जाते हैं।

यदि फलों में PG एन्जाइम की क्रिया घटा दी जाये तो फल अधिक दिनों तक ताजे बने रहेंगे। इसके लिए PG एन्जाइम कोडित करने वाले जीन की एक प्रति एक-अर्थक रचना को टमाटर में स्थानांतरित किया गया। **इस प्रकार के पारजीनी पौधों में PG की क्रिया बहुत कम हो गई, जिससे उसके फल देर से नरम होते हैं। इस प्रकार की एक किस्म को 'फ्लेवर सेवर' (Flavr Savr) कहा जाता है,** और इसे संयुक्त राज्य अमेरिका में व्यापारिक स्तर पर उगाने के लिये स्वीकृति दी गई है।

वनस्पति तेलों के वसीय अम्ल संघटन को प्रति-अर्थक टेक्नोलाजी द्वारा परिवर्तित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, एन्जाइम स्टिएरोइल-ACP डिसेचुरेस (ACP = acyl-carrier protien, एसिल वाहक प्रोटीन) स्टिएरोइल-ACP का ओलिओइल-ACP में परिवर्तन उत्प्रेरित करता है।

यह वसीय अम्लों के विसंतृप्तन (desaturation) की प्रथम अभिक्रिया है। इस एन्जाइम को कोडित करने वाले जीन की प्रतिअर्थक रचना को **ब्रै. रेपा (= ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस) एवं वॅ. नेपस में स्थानांतरित किया गया है।** इस प्रकार प्राप्त पारजीनी पौधों में इस एन्जाइम की क्रिया बहुत ही कम थी। इसके साथ ही, इनके तेल में स्टिएरिक अम्ल (stearic acid) का अंश 2 प्रतिशत से बढ़कर 40 प्रतिशत हो गया, और ओलेइक (oleic) अम्ल का अंश घट गया।

इस प्रकार के परिवर्तनों का उद्देश्य अब तक केवल कोको बटर (cocoa butter) से प्राप्त होने वाले संतृप्त वसीय अम्लों की अन्य स्रोतों से प्राप्ति है।

परागकणों के परिपक्वन के लिए फ्लैवोनाएड (flavonoid) अनिवार्य होते हैं। चैल्कोन सिंथेस (chalcone synthase, CHS) फ्लैवोनाएड संश्लेषण का मुख्य एन्जाइम है। CHS जीन की प्रति-अर्थक रचना को पिट्यूनिया (Petunia) में स्थानांतरित किया गया। इन पारजीनी पौधों में CHS की क्रिया नगण्य थी, उनके फूल सफेद तथा परागकण निष्क्रिय थे; अतः ये पौधे नर बंध्य थे।

यह नर बंध्यता(male sterility) प्रभावी (dominant) होती है, अतः सामान्य पौधों से संकरण करने से प्राप्त संततियां भी नर बंध्य होती हैं। इस कारण, इस नर बंध्य पद्धति के व्यावहारिक उपयोग के लिए सुविधाजनक एवं सस्ती पुनःस्थापन विधि का विकास करना एक अनिवार्य आवश्यकता है।

पौधों में अभिव्यक्त (expressed) कुछ पारजीन (transgene) जो मूल्यवान एवं उपयोगी पालीपेप्टाइड/प्रोटीन कोडित करते हैं।

पालीपेप्टाइड	जीन स्रोत	पौधे में अभिव्यक्त	अनुप्रयोग (Applications)	टिप्पणी (Remarks)
हिरुडिन (Hirudin)	संश्लिष्ट	ब्रै. नेपस	थ्राम्बिन (thrombin) निरोधक	व्यापारिक उत्पादन ओलेसिन जीन के साथ संगलित (fused)
प्रतिरक्षी (antibodies IgG, IgM, काइमेरीय, एकल श्रृंखला, आदि)	मूषक (mouse)	-	कई	निष्कर्षणीय (extractable) प्रोटीन का 2 प्रतिशत तक अभिव्यक्त
α-ट्राइकोसैथिन (α-Trichosanthin)	चीनी औषधीय पौधा	-	HIV प्रतिकृति (replication) निरोधक	उच्च अभिव्यक्ति
इंटरफेरान (Interferon)	मानव	-	प्रति-वाइरस (antiviral) क्रिया	
एन्जाइम (Enzyme)				
α-एमाइलेस (α-amylase)	बैसिलस लिकेनीफार्मिस (B. licheniformis)	-	स्टार्च द्रवण (liquefaction)	औद्योगिक उपयोग
(1-3, 1-4) β-ग्लुकैनेस (glucanase)	ट्राइकोडर्मा रीसेई (Trichoderma-reesei)	-	निःसवन (brewing)	औद्योगिक उपयोग
β(1, 4) जाइलैनेस (xylanase)	क्लास्ट्रीडियम (Clostridium)	तंबाकू, कैनोला	पशु आहार, कागज एवं लुगदी	औद्योगिक उपयोग
शोध अभिकर्मक (Research Reagent)				
ऐविडिन (Avidin)*	कुक्कुट	मक्का	शोध	सिग्मा (Sigma), सं. रां. अ. द्वारा विपणित
β-ग्लुकयूरोकिडेस (β-glucuronidose)	ई. कोली	मक्का	शोध	सिग्मा, सं. रा. अ. द्वारा विपणित

* मुर्गी के अण्डे से प्राप्त एविडिन की लागत का पचासवाँ हिस्सा।

पौधों में जीन स्थानांतरण में समस्याएँ

1. पारजीनों की अभिव्यक्ति का निम्न स्तर: यह समस्या अधिकांश पारजीनों में पाई जाती है। इसके निम्नलिखित कारण हो सकते हैं:

(1) कम क्रियाशील प्रमोटर,
(2) पारजीन की अधिक लंबाई,
(3) पारजीन में ऐसे कोडानों की उपस्थिति, जिनका पौधों में बहुत कम उपयोग होता है,
(4) जिनोम में पारजीन के समाकलन स्थल का जीन अभिव्यक्ति के लिये उपयुक्त न होना, आदि।

उदाहरणार्थ, बै. थुरिंजिएसिस के संपूर्ण लंबाई वाले cry जीन को स्थानांतरित करने पर इसकी अभिव्यक्ति इतनी कम थी कि पारजीनी पौधों को खाने वाले केवल लक्ष्य कीट के लार्वा में से केवल 20 प्रतिशत ही मर सके। किंतु जब cry जीन के छोटे या रुंडित (truncated) रूप का स्थानांतरण किया गया, तो इसकी अभिव्यक्ति बढ़कर पत्तियों में उपस्थित घुलनशील प्रोटीन का 0.04 प्रतिशत तक हो गई। cry जीन के इस छोटे संस्करण का कोडन क्रम सुधारने पर जीन अभिव्यक्ति 100-गुना और बढ़ गई।

2. जीन निःस्वरण (Gene Silencing):

- कई पारजीनों की पौधों में अभिव्यक्ति निरोधित (suppress) हो जाती है; इसे जीन निःस्वरण (gene silencing) कहते हैं।
- जीन निःस्वरण में बहुधा प्रमोटरों तथा/या कोडन क्रमों का मेथिलीकरण (methylation) होता है, और पारजीन की एक से अधिक प्रतियाँ समाकलित होने पर इसकी संभावना बढ़ जाती है।
- निःस्वरण अनुलेखन (transcription) की दर अथवा RNA अनुलेखों के विघटन (degradation) को प्रभावित करता है। इसे कम करने की कई कारगर युक्तियाँ हैं।

3. पारजीनी पौधों में अवांछनीय लक्षण:

- बहुत से पारजीनी पौधों में ऊतकक्षय (necrosis), कम वृद्धि, बंध्यता, आदि जैसे अवांछनीय लक्षण भी पाए जाते हैं। इन समस्याओं के कई कारण हो सकते हैं, जैसे पारजीन का किसी अनिवार्य जीन के भीतर समाकलित होना, पारजीन द्वारा कोडित एन्जाइम का कोशिका के गलत प्रकोष्ठ (compartment) में उपस्थित होना, आदि।
- इन समस्याओं के निराकरण के लिए उपयुक्त युक्तियाँ उपलब्ध हैं। किसी अनिवार्य जीन के बीच में समाकलन से उत्पन्न होने वाले अवांछनीय लक्षणों वाले पौधों से छुटकारा पाने का एक कारगर उपाय निम्नलिखित है।
- अलग-अलग रूपांतरणों से प्राप्त बहुत से पारजीनी पौधों का उत्पादन करके उनका मूल्यांकन करना चाहिए, और उनमें से अच्छे लक्षणों वाली पारजीनी लाइन को चुनना चाहिये।

4. रूपांतरण (Transformation) की निम्न आवृत्ति: अधिकांश विधियों से प्राप्त रूपांतरणों की आवृत्ति काफी कम होती है, अथवा इन विधियों के उपयोग के लिए वैज्ञानिकों को दक्ष होना चाहिए अथवा पौधों में पुनर्जनन विधियों (regeneration protocols) को उपलब्ध होना चाहिए।

5. यादृच्छिक (random) समाकलन: पौधों में साधारणतया पारजीनों का यादृच्छिक समाकलन होता है। इस कारण पारजीनों का समाकलन वांछनीय जीनों के भीतर भी हो सकता है। इसके साथ ही, एक जिनोम में पारजीनों की एक से अधिक प्रतियों का समाकलन हो सकता है, जिससे जीन निःस्वरण की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं। पौधों में पारजीनों के लक्ष्यबद्ध समाकलन के प्रयास जारी हैं।

6. ऐग्रोबैक्टीरियम द्वारा संदूषण (Contamination): ऐग्रोबैक्टीरियम द्वारा जीन स्थानांतरण विधि से प्राप्त पौधों में ऐग्रोबैक्टीरियम कोशिकाएँ जीवित बची रह सकती हैं। इस कारण वास्तविक पारजीनी पौधों की पहचान में समस्या होती है। इसी प्रकार की समस्या सीधे जीन स्थानांतरण विधियों में भी हो सकती है। किंतु इन समस्याओं से निपटने की विशिष्ट एवं दक्ष युक्तियाँ उपलब्ध हैं।

व्यापारिक कृषि के लिये अनुमति प्राप्त कुछ चुनी हुई पारजीनी किस्में

फसलें	पारजीनी किस्म	पारजीन द्वारा उत्पादित लक्षण	अनुमति मिलने का वर्ष
कैनोला (Canola)	लारिकाल	तेल में उच्च लारिक अम्ल अंश	1995
	राउण्ड्अप रेडी	ग्लाएफोसेट (शाकनाशी) रोधिता	1999
मक्का	यील्डगार्ड	यूरोपीय मक्का छेदक रोधिता (cry जीन)	1995
मधुर मक्का (sweet corn)	नाकआउट	योरोपीय मक्का छेदक रोधिता (cry जीन)	1995
कपास	बोलगार्ड	गोलक शलभ (boll worm) एवं तंबाकू बडवर्म (budworm) रोधिता (cry जीन)	1995
	BXN कपास	ब्रोमाक्सिनिल (bromoxynil) शाकनाशी रोधिता	1995
पपीता	सनअप, रेनबो	पपीता रिंग स्पॉट वाइरस	1997
आलू	न्यूमोफ	कोलोराडो आलू भृग (beetle) रोधिता	1995
	न्यूमोफ Y	कोलोराडो आलू भृग एवं आलू पर्णबेल्लन वाइरस रोधिता	1999
सोयाबीन	फ्रीडम्	वाइरस रोधिता	**1995**
	राउंडअप रेडी	ग्लाएफोसेट (शाकनाशी) रोधिता	**1995**
टमाटर	एन्डलेस समर	धीमी गति से फल पकना	**1995**
	फ्लेवर सेवर*	फलों का लंबी अवधि तक न गलना	**1994**
स्क्वैश	फ्रीडम II	वाइरस रोधिता	**1995**
चुकंदर	अज्ञात	ग्लुफोसिनेट (glufosinate; शाकनाशी) रोधिता	**2000**

Transgenic crops approved for commercial use

Product	**Genetically altered traits**	**Company**	**Year of approval and product name**
Flavor savr Tomato	Delayed ripening	Calgene	1994, Flavar Savr
Cotton	Bt gene incorporated plants	Monsanto	1995 Bollgard
	Resistant to glyphosate	Calgene	1996, Round up

	Resistant to Sulphomoyl urea	Dupont	1996
Soybean	Resistant to glyphosate	Monsanto	1995, Round up Ready
	Bt gene incorporated	Ciba-Geigy	1996
	Resistant to glufosinate	Devalb, Agro Evo	1996, Liberty Link
Maize	Male sterility		1996
	Bt gene incorporated	Plant Genetic Sys	1996 Yield Gard
		Novartis	
Rapeseed	Altered oil composition	Calgene	1995. Laurical
Canola	(high lauric acid)		
Squash	Resistant to virus	Asgrow	1995. Freedom

cry जीन

बै. थुरिन्जिएन्सिस का योरोप में कुछ कीटों के नियंत्रण के लिए प्रथम विश्व युद्ध के समय से ही उपयोग हो रहा था।

इसकी कीटनाशी क्रिया इसके बीजाणुओं (spores) में उपस्थित क्रिस्टल प्रोटीन (crystal protein) के कारण होती है, जिसे इसका cry जीन कोडित करता है।

अब तक cryजीनों के 18 से अधिक विकल्पी ज्ञात हो चुके हैं **प्रत्येक विकल्पी एक भिन्न कीटनाशी गुणधर्म वाला प्रोटीन कोडित करता है।**

- **Cry प्रोटीन कीटों की मध्यआंत्र (midgut) के क्षारीय वातावरण में घुल जाते हैं, और फिर इन्हें प्रोटिएस विदलित (cleave) करता है। विदलन के बाद 60 kDa का आविष खंड (toxin fragment) प्राप्त होता है। अतः Cry प्रोटीन वस्तुतः पूर्वआविष (protoxin) होते हैं, जिनके प्रोटीन लयन (proteolysis) से आविष उत्पन्न होता है।**

बैसिलस थुरिजिएंसिस (Bacillus thuringiensis) द्वारा उत्पादित Cry प्रोटीन एवं उन्हें कोडित करने वाले cry जीन

जीन	**लक्ष्य कीट**
Cry IA-E	लेपिडाप्टेरा (Lepidoptera)
Cry IIA-B	डिप्टेरा (Diptera)
Cry IIIA-C	कोलिओप्टेरा (Coleoptera)
Cry IVA -D	**डिप्टेरा**
Cry V	निमैटोड
Cry VI	निमैटोड

- इस प्रकार का माध्यम बायरेफ्रिजेंट कहलाता है क्योंकि यह रेफ्रेक्शन के दो इंडेक्स को निरुपित करता है। इस बायरेफ्रिजेंट के कारण इमेज में कंट्रास्ट उत्पन्न होता है।

बायरेफ्रिजेन्स (B) को निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है ।

$B = Ne - No = \frac{R}{t}$

B = Birefrigence

Ne = One index of refraction

No = Second index of refraction

R = Retardation of light

t = Thickness of the specimen

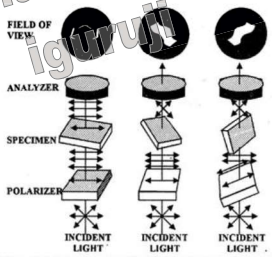

Diagrammatic representation of principle of working of polariser

कार्य प्रणाली (Working mechanism)

- एक विषमदैशिक ओब्जेक्ट को क्रोसित पोलेराइजर तथा एनालराइजर के मध्य रखा जाता है। अधिकतम तथा न्यूनतम चमकिलापन (Brightnes) प्राप्त करने के लिए ओब्जेक्ट को $\pm$ 45° से घुमाते हैं।
- जब ओब्जेक्ट को घूर्णित नहीं किया जाता है तो गहरा क्षेत्र (Dark field) प्राप्त होता है । जब इसे $\pm$ 45° से घूर्णित किया जाता है तो इमेज का चमकीलापन अधिकतम होता है।

उपयोग (Uses) –

इस माइक्रोस्कोप का उपयोग कोशिका विभाजन के दौरान spindle के निर्माण के अध्ययन हेतु किया जाता है। विभिन्न प्रकार के जैविक तंतुओं के आण्विक संगठन का अध्ययन इस माइक्रोस्कोप से किया जा सकता है।

TOPIC: इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी (Electron Microscope)

इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी की डिजायन का प्रतिपादन नोल व रस्का (Knoll and Ruska, Germany, 1932), माझेन (Marton-Belgium-1934) तथा प्रेब्स व मिलर (Prebus and Miller-Canada-1934) ने किया था।

इसकी विच्छेदन क्षमता बहुत अधिक होती है। वर्तमान में इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी की विच्छेदन क्षमता 3Å है।

संरचना (Structure) - इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी के निम्न भाग है।

(i) फिलामेंट या कैथोड (Filament or Cathode) - यह इलेक्ट्रोन का मुख्य स्त्रोत है। केथोठ से इलेक्ट्रोन का संकरा पूंज उत्सर्जित होता है।

(ii) केथोड-रे-ट्यूब (Cathode Rays tube) - इस नलिका के द्वारा इलेक्ट्रोन गुजरकर कंडेसर लैंस तक पहुंचते हैं।

(iii) कंडेसर लैंस (Condenser lens) – यह लैंस मेग्नेटिक कोइल होती है । जो इलेक्ट्रॉन को ओब्जेक्ट के तल में कंडेस करता है।

(iv) ओब्जेक्टिव लैंस (Objective lense) – यह भी एक मेग्नेटिक कोइल होती है जो ओब्जेक्ट की प्रथम आवर्धित इमेज को उत्पन करती है । यह इमेज इंटर मिडिएट प्रकार की होती है।

(v) प्रोजेक्टर लैंस (Projector lense) - यह भी एक मेग्नेटिक कोइल होती है यह ओब्जेक्टिव लैंस द्वारा उत्पन्न इमेज को आवर्धित करता है।

(vi) फोटोग्राफिक प्लेट (Photographic Plate) – यह ओब्जेक्ट की फाइनल इमेज को प्राप्त करता है ओब्जेक्ट को सदैव कंडेसर लैंस तथा ओब्जेक्टिव लैंस के मध्य रखा जाता है । इसके अलावा इलेक्ट्रॉन के पथ में निर्वात को भी बनाये रखा जाता है। क्योंकि इलेक्ट्रोन का परिवहन केवल निर्वात में ही संभव है।

कार्य प्रणाली (Working mechanism)

- फिलामेंट या केथोड के द्वारा इलेक्ट्रोन का उत्सर्जन होता है। कंडेसर लैंस द्वारा इस इलेक्ट्रोन पुंज को ओब्जेक्ट पर आपतित किया जाता है ।
- यह इलेक्ट्रोन ओब्जेक्ट में उपस्थित अणुओं की परमाण्विक न्यूक्लियाई के साथ टकराते हैं।
- अधिक अणुभार वाली एटोमिक न्यूक्लिआई इलेक्ट्रोन बीम को प्रकीर्णित (Scattered) करती है । जबकि कम अणुभार वाली एटोमिक न्यूक्लिआई इलेक्ट्रोन बीम को प्रकीर्णित नहीं करती है।
- इलेकट्रोन माइक्रोस्कोप में इमेज का निर्माण इलेक्ट्रोन के प्रकीर्णन पर निर्भर करता है। अतः इमेज के निर्माण में उच्च परमाणु भार वाली एटोमिक न्यूक्लिआई का अधिक योगदान होता है। जिन इलेक्ट्रोन में प्रकीर्णन नहीं हो पाता है।
- वे ओब्जेक्टिव तथा प्रोजेक्टर लैंस द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र द्वारा फोटोग्राफीक प्लेट पर फोकस किये जाते हैं । जो इलेक्ट्रोन ओब्जेक्ट में एटोमिक न्यूक्लिआई द्वारा प्रकीर्णित हो जाते हैं वे ओब्जेक्टिव लैंस के छिद्र के बाहर प्रवाहित होते हैं।
- ओब्जेक्टिव लैंस द्वारा ओब्जेक्ट की मध्यवर्ती इमेज का निर्माण होता है।
- प्रोजेक्टर लैंस इस इमेज को और आवर्धित कर देता है। फोटोग्राफीक प्लेट पर ओब्जेक्टिव की आवर्धित इमेज ओब्जेक्ट की एटोमिक न्यूक्लिआई द्वारा प्रकीर्णित इलेक्ट्रोन के कारण होती है।

- फोटोग्राफिक प्लेट पर उत्पन्न इमेज का आवर्धन दो बातों पर निर्भर करता है।

(i) इलेक्ट्रोन की तरंग दैर्ध्य λ पर

(ii) ओब्जेक्टिव लैंस के न्यूक्लिआई अपरचर (NA) पर

इलेक्ट्रोन की λ का मान 0.005 nm होता है। इस ओब्जेक्टिव का न्यूक्लियर अपरचर 00005 nm होना चाहिए।

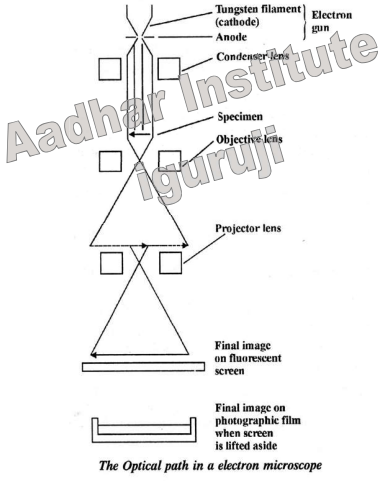

The Optical path in a electron microscope

विच्छेदन की सीमा (Limit of Resolution)

$= \frac{0.61\lambda}{NA}$

$= \frac{0.61 \times 0.005}{0.005}$ (light)

= 6.1 nm or 0.0061 µm

(ii) इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी की विच्छेदन की सीमा बहुत कम होती है अतः इसकी विच्छेदन क्षमता अधिक होती है व इमेज को और आवर्धित किया जा सकता है।

प्रकार (Types) - इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोप मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं।

(1) SEM (Scanning electron microscope)

(2) TEM (Transmission electron microscope)

(1) स्कैनिंग इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोप (Scanning electron microscope) -

- **इस माइक्रोस्कोप का निर्माण नोल (Knoll-1935) ने किया था। इसमें ओब्जेक्ट की त्रिविमी रचना का प्रतिविम्ब प्राप्त होता है।**
- जब इलेक्ट्रोन पूंज, ओब्जेक्ट पर आपतित होता है तो ओब्जेक्ट से टकराने के पश्चात द्वितीयक इलेक्ट्रोन (Secondary electron) उत्पन्न होते हैं।
- ये द्वितीयक इलेक्ट्रोन, फोटोग्राफिक प्लेट पर ओब्जेक्ट की त्रिविमीय इमेज बनाते हैं।

(2) ट्रांसमिशन इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोप (Transmission electron microscope) –

- इस माइक्रोस्कोप का निर्माण **नोल तथा रस्का (Knoll and Ruska - 1932)** ने किया था।
- इसमें इलेक्ट्रोन के बहुत पतले पूंज का उपयोग किया जाता है ।
- यह इलेक्ट्रोन पुंज ओब्जेक्ट से टकराकर प्रकीर्णित हो जाता है । इस प्रकीर्णित किरणों को चुंबकीय कंडेसर के माध्यम से फोटोग्राफिक प्लेट पर डाला जाता है तथा ओब्जेक्ट का प्रतिबिम्ब प्राप्त किया जाता है।
- इस माइक्रोस्कोप से अभिरंजित तथा बिना अभिरंजित कोशिकाओं को देख सकते हैं।

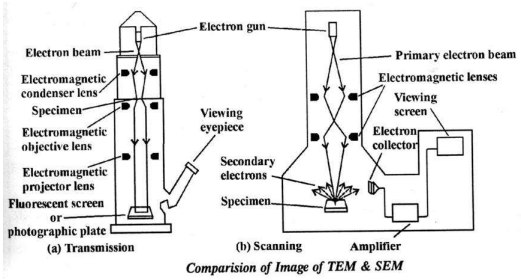

Comparision of Image of TEM & SEM

उपयोग (Uses)

Photosynthesis

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical background) :

17 वीं शताब्दी से पूर्व ऐसा विश्वास किया जाता था कि पौधे अपना भोजन मृदा से प्राप्त करते हैं।

- **वॉन हेलमॉण्ड** (Van Helmont 1648) ने यह निष्कर्ष निकाला कि पौधों को भोजन मृदा से नहीं जल से प्राप्त होता है।
- **स्टीफेन हेल्स** (Stephen Hales 1727) (पादप कार्यिकी के पिता) इन्होंने ज्ञात किया कि पौधे अपना पोषण वायु तथा प्रकाश से प्राप्त करते हैं तथा प्रकाश इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- **जोसेफ प्रीस्टले** (Joseph Priestley 1772) ने यह प्रदर्शित किया कि पौधे मोमबत्ती के जलने से उत्पन्न दूषित वायु (अर्थात प्लोजिस्टोन) को शुद्धिकृत करते हैं अर्थात शुद्ध वायु (डिफ्लोजिस्टोन) उत्पन्न करते हैं।
- **जॉन इन्जेन–हाउस** (Jan Ingen- Housz 1779) ने अपने प्रयोग द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि वायु का शुद्धिकरण केवल पौधों के हरे भागों द्वारा तथा सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में होता है। हरी पत्तियाँ तथा वृन्त सूर्य से प्रकाश में डिफ्लोजिस्टिकेटेड वायु (O_2 युक्त) तथा अंधकार के समय फ्लोजिस्टिकेटेड वायु निष्कासित करती हैं।
- **जीन सिनेबियर** (Jean Senebier 1782) ने सिद्ध किया कि पौधे सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में O_2 अवशोषित तथा O_2 उत्सर्जित करते हैं। इन्होंने यह भी प्रदर्शित किया कि O_2 निष्कासन की दर CO_2 के अवशोषण की दर पर निर्भर करती है।
- **निकोलस डी सॉस्यूर** (Nicolus de saussure 1804) ने प्रकाश संश्लेषण में जल के सहत्व को प्रदर्शित किया। इन्होंने पुनः यह प्रदर्शित किया कि CO_2 अवशोषित की मात्रा O_2 निष्कासन के बराबर होती है।
- **जुलियस रॉबर्ट मेयर** (Julius Robert Mayer 1845) ने प्रस्तावित किया कि प्रकाश में विकिरण ऊर्जा होती है और यह विकिरण ऊर्जा पौधों द्वारा रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है जो पौधों तथा जन्तुओं के जीवन को बनाये रखने का कार्य करती है।
- **लीबिग** (Liebig 1845) ने दर्शाया कि पौधों में कार्बन का प्रमुख स्त्रोत CO_2 है।
- **बॉसिनगॉल्ट** (Bousingault 1860) ने पता लगाया कि अवशोषित CO_2 का आयतन, निष्कासित O_2 के आयतन के बराबर होता है। CO_2 का अवशोषण तथा O_2 का निष्कासन सूर्य के प्रकाश के प्रभाव से तुरंत प्रारम्भ हो जाता है।
- **जुलियस वॉन सैक्स** (Julius Von Sachs 1862) ने प्रदर्शित किया कि प्रकाश संश्लेषण का प्रथम दृश्य उत्पाद स्टार्च है। उन्होंने यह भी बताया कि क्लोरोफिल क्लोरोप्लास्ट में रहता है।
- **मेल्विन कैल्विन** (Melvin Calvin 1954) ने प्रकाश संश्लेषण के मार्ग का पता लगाया (अप्रकाशीय अभिक्रिया से संबंधित) तथा C_3 चक्र दिया। इन्हें रेडियोएक्टिव कार्बनडाईऑक्साइड के द्वारा मेटाबोलिक पथ को ट्रेस करने की तकनीक का पता लगाने के लिए नोबेल पुरुस्कार प्रदान किया गया।
- **ह्यूबर, माइकल एवं डिसेनहॉफर** (Huber, Michel and Deisenhofer 1985) ने बैंगनी प्रकाश–संश्लेषी बैक्टीरिया रोडोस्यूडोमोनास विरिडिस से प्रकाशसंश्लेषी अभिक्रिया केन्द्र (Photosynthetic reaction center) को क्रिस्टलीकृत किया। इन्होंने इसकी संरचना को X-किरण विवर्तन तकनीक द्वारा देखा। 1988 में रसायन शास्त्र में उनके कार्यों के लिए उन्हें नोबेल पुरुस्कार दिया गया ।

क्लोरोप्लास्ट–प्रकाशसंश्लेषण का स्थान (Chloroplast-The site of photosynthesis) : क्लोरोप्लास्ट हरे वर्णक हैं जो प्रकाशस्वपोषी यूकैरियोट में प्रकाशसंश्लेषण के स्थान के रूप में कार्य करते हैं। यह CO_2 को कार्बोहाइड्रेट में स्थिरीकृत करता है।

प्रकाशसंश्लेषण की इकाई को प्रकाशरासायनिक (Photochemical) अभिक्रिया के लिए आवश्यक अणुओं की संख्या या एक ऑक्सीजन अणु के निष्कासन द्वारा परिभाषित कर सकते हैं। पार्क तथा बिगिन्स (Park and Biggins, 1964) ने प्रकाशसंश्लेषण की इकाई को क्वाण्टासोम नाम दिया। ये क्वाण्टासोम 230 क्लोरोफिल अणुओं के बराबर होते हैं।

अवशोषण एवं क्रिया वर्णक्रम (Absorption and action spectrum) : वर्णक द्वारा प्रकाश के प्रत्येक तरंगदैर्ध्य के अवशोषण को प्रदर्शित करने वाले वक्र को अवशोषित वर्णक्रम (Absorption spectrum) कहते हैं। प्रकाश की विभिन्न तरंगदैर्ध्यों पर प्रकाशसंश्लेषण की दर से दर्शाने वाले वक्र को क्रिया वर्णक्रम (Action spectrum) कहते हैं।

अवशोषण वक्र का अध्ययन स्पेक्ट्रोफोटोमीटर की सहायता से किया जाता है। क्लोरोफिल α तथा क्लोरोफिल b का अवशोषण स्पेक्ट्रम यह प्रदर्शित करता है, कि ये वर्णक मुख्य रूप से नीले तथा लाल प्रकाश का अवशोषण करते हैं (क्लोरोफिल α के लिए 430nm तथा 662nm, क्लोरोफिल b के लिए 455nm तथा 644nm)। क्रिया वर्णक्रम यह प्रदर्शित करता है कि अधिकतम प्रकाशसंश्लेषण वर्णक्रम के नीले तथा लाल क्षेत्र में होता है।

- **सर्वप्रथम टी.डब्ल्यू.एंजलमेन (T.W. Engelmann, 1882) ने हरे शैवाल स्पाइरोगायरा एवं ऑक्सीजन ग्रहण करने वाले बैक्टीरिया के प्रकाश द्वारा प्रकाशसंश्लेषण के क्रिया वर्णक्रम का अध्ययन किया था।**

इस प्रकरण में प्रकाशसंश्लेषण की वास्तविक दर (ऑक्सीजन के निष्कासन या कार्बन डाइऑक्साइड के उपयोग) का मापन तरंगदैर्ध्य के कार्य के रूप में किया जाता है।

वर्णक (Pigments)

हरित लवक में तीन प्रकार के वर्णक होते हैं यथा (1) पर्णहरित, (2) केरोटिनाइड्स एवं (3) फाइकोबिलिन्स (तालिका-1.)

पादपों के विभिन्न समूहों में प्रकाश संश्लेषी वर्णकों के प्रकार एवं वितरण

प्रकाश संश्लेषी वर्णक		वितरण
पर्णहरित		
1. क्लोरोफिल a (Chlorophyll a) ($C_{55}H_{72}O_5N_4Mg$)	पीत-हरा	प्रकाश संश्लेषी जीवाणुओं के अतिरिक्त सभी उच्च पादप
2.क्लोरोफिल b(Chlorophyll b) ($C_{55}H_{70}O_6N_4Mg$)	नीला-हरा	सभी उच्च पादप एवं हरे शैवाल (क्लोरोफाइसी)
3. क्लोरोफिल c (Chlorophyll c) ($C_{35}H_{32}O_5N_4Mg$)	हरा	डायएटम भूरे शैवाल (क्रिप्टोफायसी)
4. क्लोरोफिल d (Chlorophyll d) ($C_{54}H_{70}O_6N_4Mg$)	हरा	लाल शैवाल (रोडोफायसी)
5. बेक्टीरियो-क्लोरोफिल्स (Bacterio chlorophylls) ($C_{55}H_{74}O_6N_4Mg$)	बैंगनी	परपल सल्फर, नॉन परपल सल्फर, हरे सल्फर, जीवाणु जैन्थोफायसी, धायोरोडेसी, एथायोरोडेसी, क्लोरोबेक्टिरिएसी
6. बैक्टीरियोविरिडिन (Bacteriovirdin) ($C_{55}H_{72}O_6N_4Mg$)	हरा	हरे सल्फर जीवाणु (क्लोरो बैक्टिरिएसी)
केरोटीनाइड्स (Carotenoids)		
1. केरोटीन्स (Carotenes) एवं 2. जेन्थोफिल्स (Xanthophylls) ($C_{40}H_{56}O_2$)	नारंगी, पीले	प्रकाश संश्लेषी जीवाणु, शैवाल एवं उच्च पादप
फाइकोबिलिन्स (Phycobilins)		
1. फाइकोइरिथिन (Phyoerythrin)	लाल	लाल एवं नीले-हरे शैवाल क्रिप्टोफायसी,
2. फाइकोसायनिन (Phycocyanin)	नीला	लाल एवं नीले-हरे शैवाल क्रिप्टोफायसी,

प्रकाशसंश्लेषण की क्रियाविधि (Mechanism of photosynthesis)

- **निकोलस डी सॉस्यूर (Nicolas de Saussure)** की खोज के आधार पर "पौधों द्वारा निष्कासित O_2 की मात्रा, पौधों द्वारा अवशोषित ऑक्सीजन की मात्रा के बराबर होती है। ऐसा विश्वास था कि प्रकाशसंश्लेषण में निष्कासित यह O_2, CO_2 से प्राप्त होती है। किन्तु रुबेन ने इस धारणा को गलत सिद्ध किया।

- 1930, में **सी.बी. वॉन नील ने** यह सिद्ध किया कि, बैक्टीरिया H_2S (जल के स्थान पर) तथा CO_2 का प्रयोग कार्बोहाइड्रेट के संश्लेषण में निम्नानुसार करते हैं–

$$6CO_2 + 12H_2S \rightarrow C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 12S$$

इसके द्वारा वॉन नील ने अभिगृहीत दिया कि हरे पौधों में H_2S के स्थान पर जल प्रयुक्त तथा सल्फर के स्थान पर ऑक्सीजन निष्कर्षित होती है। इन्होंने यह दर्शाया कि जल प्रकाश संश्लेषण में इलेक्ट्रॉन दाता होता है।

$$6CO_2 + 12H_2O \rightarrow C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2$$

- इसे **रूबेन एवं कामेल ने 1941 में क्लोरेला (एक हरित शैवाल) के प्रयोग द्वारा ज्ञात्यापित किया था।**

उन्होंने जल में ऑक्सीजन में समस्थानिक अर्थात H_2O (सामान्य) के स्थान पर $H_2{}^{18}O$ का प्रयोग किया।

यह देखा कि निष्कासित ऑक्सीजन में ^{18}O जल से प्राप्त होता है, न कि CO_2 से। सम्पूर्ण अभिक्रिया निम्नानुसार होती है

$6CO_2 + 12H_2{}^{18}O \xrightarrow{light} C_6H_{12}O_6 + 6{}^{18}O_2 + 6H_2O$ प्रकाशसंश्लेषण के दौरान ग्लूकोज में O_2 जल से आती है।

प्रकाशसंश्लेषण की आधुनिक अवधारणा (Modern concept of photosynthesis)

प्रकाशसंश्लेषण एक ऑक्सीकरण–अपचयन प्रक्रिया है, जिसमें जल ऑक्सीकृत होकर O_2 का निष्कासन तथा CO_2 अपचयित होकर स्टार्च तथा शर्करा का निर्माण करता है।

वैज्ञानिकों ने यह प्रदर्शित किया कि प्रकाशसंश्लेषण दो अवस्थाओं में पूर्ण होता है :

(1) **प्रकाश अवस्था या प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया या प्रकाश निर्भर अभिक्रिया या हिल अभिक्रिया (Light phase or Photochemical reactions or light dependent reactions of Hill's reactions) :** इस अवस्था में सूर्य के प्रकाश का अवशोषण होता है। यह सूर्य का प्रकाश रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर दिया जाता है तथा यह ऊर्जा ATP तथा NADPH + H^+ के रूप में संग्रहित हो जाती है।

(2) **अंधकार अवस्था या अप्रकाशीय या** रासायनिक अप्रकाशीय अभिक्रिया या ब्लैकमैन अभिक्रिया या जैवरासायनिक अवस्था **(Dark phase or chemical dark reations of light independent reactions or blackman reaction or Biosynthetic phase) :** इस अवस्था के दौरान कार्बोहाइड्रेट का संश्लेषण (कार्बन डाइऑक्साइड से ATP तथा NADPH में संग्रहित ऊर्जा (प्रकाशीय अभिक्रिया से प्राप्त) के द्वारा होता है।

प्रकाशसंश्लेषण की प्रकाशीय तथा प्रकाशीय अभिक्रिया के संबंध में प्रमाण निम्न हैं –

(1) क्लोरोप्लास्ट का ग्रेना तथा स्ट्रोमा खण्डों में भौतिक पृथक्करण (Physical separation of chlorophast into grana and stroma fractions) : क्लोराप्लास्ट का ग्रेना तथा स्ट्रोमा फ्रेक्शन में पृथक्करण अब संभव है। यदि ग्रेना फ्रेक्शन को उचित H-ग्राही की उपस्थिति तथा CO_2 की अनुपस्थिति में प्रकाश दिया जाए, तो ATP तथा $NADPH_2$ (स्वांगीकृत शक्तियाँ / Assimilatory power) उत्पन्न होती हैं। ये एसीमिलेटरी पावर (ATP तथा $NADPH_2$) यदि स्ट्रोमा फ्रेक्शन को CO_2 की उपस्थिति तथा प्रकाश की अनुपस्थिति में दी जाती है, तो कार्बोहाइड्रेट का निर्माण होता है।

(2) असतत् प्रकाश या अन्तरायिक प्रकाश के साथ प्रयोग (Experiments with intermittent light or Discontinuous light) : सतत् (Continuous light) प्रकाश की अपेक्षा असतत् (प्रकाश एवं अंधकार के एकान्तर अन्तरकाल वाला प्रकाश) में प्रकाशसंश्लेषण की दर तीव्र होती है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि अप्रकाशीय अभिक्रिया काल में इनका निर्माण नहीं होता है।

(3) ताप गुणांक का अध्ययन (Temperature coefficient studies) : ब्लैकमेन ने पाया कि प्रयोग में Q_{10} का मान 2 से अधिक तब होता है, जब प्रकाशसंश्लेषण तीव्र होता है तथा जब प्रकाशसंश्लेषण की दर कम होती है, तब यह Q_{10}, 2 से गिरकर इकाई अर्थात् 1 पर पहुँच जाता है। यह परिणाम यह प्रदर्शित करते हैं, कि प्रकाशसंश्लेषण की अप्रकाशीय अभिक्रिया में Q_{10} का मान दो या दो अधिक तथा प्रकाश रासायनिक या प्रकाशीय अभिक्रिया में Q_{10} का मान एक इकाई (1) होता है।

$$Q_{10} = \frac{(t+10)\,^{\circ}C \text{ ताप पर अभिक्रिया की दर}}{t^{\circ}C \text{ ताप पर अभिक्रिया की दर}}$$

प्रकाशीय अभिक्रिया या प्रकाशरासायनिक अभिक्रिया (Light reaction or Photochemical reaction or Photochemical reactions) : प्रकाश अभिक्रिया क्लोरोप्लास्ट के ग्रेना भाग में होती है। इस अभिक्रिया में वे क्रियाविधियाँ जो प्रकाश पर निर्भर हैं, सम्मिलित हैं। **एसीमिलेटरी या स्वांगीकारक पावर (ATP तथा $NADPH_2$) मुख्यतः प्रकाश अभिक्रिया में ही उत्पन्न होते हैं।**

रोबिन हिल (1939) ने सर्वप्रथम यह दर्शाया कि स्टेलेरिया मीडिया तथा लेमियम एल्बम की पत्तियों के सत्व (Extract) से प्राप्त क्लोरोप्लास्ट को एक उचित इलेक्ट्रॉन ग्राही युक्त परखनलिका में दिया जाता है। उदाहरण – पोटेशियम फेरोक्जेलेट (कुछ पौधें केवल इसी रसायन का प्रयोग करते हैं), तथा पोटेशियम फेरीसायनाइड, जल के प्रकाशरसायन विस्थण्डन के कारण ऑक्सीजनयुक्त होती है। इस परिस्थितियों में कोई CO_2 का उपयोग नहीं होता है और न ही किसी प्रकार के कार्बोहाइड्रेट का निर्माण होता है, किन्तु इलेक्ट्रॉन ग्राहियों का प्रकाश चलित अपचयन (Light-driven reduction) O_2 के निष्कासन के द्वारा पूर्ण होता है।

$$4Fe^{3+} + 2H_2O \leftrightarrow 4Fe^{2+} + 4H^+ + O_2 \uparrow$$

प्रकाशसंश्लेषण के दौरान जल का विखण्डन प्रकाशअपघटन (Photolysis) कहलाता है। यह अभिक्रिया इसके **खोजकर्ता के नाम के आधार पर हिल अभिक्रिया कहलाती है।**

हिल अभिक्रिया द्वारा सिद्ध होता है कि :

(1) प्रकाशसंश्लेषण में ऑक्सीजन जल से मुक्त होती है।

(2) CO_2 के अपचयन के लिए इलेक्ट्रॉन जल से प्राप्त होते है, (अर्थात् एक अपचयित पदार्थ हाइड्रोजन दाता उत्पन्न होता है, जो बाद में CO_2 का अपचयन करता है)।

हिल द्वारा अपनी प्रसिद्ध हिल अभिक्रिया के लिए **डाइक्लोरोफिनोल इण्डोफिनोल (Dichlorophenol indophenol) रंजक** का प्रयोग किया गया।

आरनॉल (1961) के अनुसार इस अभिक्रिया में प्रकाश ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। यह ऊर्जा ATP में संग्रहित (क्लोरोप्लास्ट में ATP का निर्माण फोटोफास्फोराइलेशन कहलाता है) होती है, तथा इलेक्ट्रॉन ग्राही $NADP^+$ से, सभी जीवितों में एक पदार्थ $NADP^+$ का निर्माण हाइड्रोजन दाता के रूप में होता है। इलेक्ट्रॉन ग्राही $NADP^+$ से NADPH हाइड्रोजन दाता का निर्माण (फोटोरिडक्शन) या अपचायक शक्ति (reducing power) NADPH का निर्माण कहलाता है।

क्वाण्टम प्राप्ति (Quantum yield)

(i) प्रकाशसंश्लेषण की दर या प्राप्ति की गणना क्वाण्टम प्राप्ति या O_2 निष्कासन द्वारा की जा सकती है। जिसे "प्रकाशसंश्लेषण में अवशोषित प्रकाश के प्रति क्वाण्टम से निष्कासित O_2 अणुओं की संख्या द्वारा परिभाषित किया जा सकता है।

(ii) प्रकाशसंश्लेषण में आवश्यक क्वाण्टम = 8 अर्थात एक ऑक्सीजन अणु को मुक्त करने के लिए प्रकाश के 8 क्वाण्टा की आवश्यकता होती है।

(iii) अतः क्वाण्टम प्राप्ति = 1/8 = 0.125 (अर्थात 1 का एक प्रभाज) जैसे – 12% ।

इमरसन प्रभाव तथा रेड ड्रॉप (Emerson effect and Red drop) : आर. इमरसन तथा सी. एम. लुईस (1943) ने यह अवलोकन किया कि प्रकाशसंश्लेषण की क्वाण्टम प्राप्ति स्पेक्ट्रम (680nm या अधिक) के सुदूर लाल सिरे की ओर घटती जाती है। क्वाण्टम की प्राप्ति प्रति प्रकाश क्वाण्टम अवशोषण में निष्कासित O_2 की संख्या है। चूंकि इस क्वाण्टम प्राप्ति में कमी का अवलोकन सुदूर लाल क्षेत्र या स्पेक्ट्रम के लाल क्षेत्र में दूर होता है इसे रेड ड्रॉप कहते हैं।

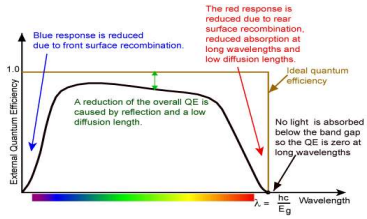

इमरसन तथा उनके सहयोगियों ने यह अवलोकन किया कि यदि छोटी तरंगदैर्ध्य (680nm से कम) के प्रकाश को 680nm या उससे अधिक तरंगदैर्ध्य के प्रकाश के साथ समान रूप से प्रदान किया जाये, तब 680nm या उससे अधिक तरंगदैर्ध्य के प्रकाश की प्रकाश–संश्लेषी दक्षता बढ़ जाती है। छोटी तथा लम्बी तरंगदैर्ध्य के प्रकाश को अलग–अलग प्रदान करने से प्रकाशसंश्लेषण में क्वाण्टम प्राप्ति अधिक होती है। **प्रकाश–संश्लेषी दक्षता या क्वाण्टम प्राप्ति की यह वृद्धि इमरसन प्रभाव व इमरसन वर्द्धन प्रभाव (Emerson enhancement effect) कहलाती है।**

$$E = \frac{\text{संयुक्त पुंजों में क्वाण्टम की प्राप्ति} - \text{लाल पुंज में क्वाण्टम प्राप्ति}}{\text{सुदूर लाल पुंज में क्वाण्टम प्राप्ति}}$$

(4) दो वर्णक तंत्र (Two pigment systems) : **इमरसन प्रभाव की खोज दो स्पष्ट प्रकाश–रासायनिक प्रक्रिया को दर्शाती है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये दो भिन्न** विशिष्ट वर्णकों के समूह से सम्बन्धित रहती है।

वर्णक तंत्र I तथा II अचक्रीय इलेक्ट्रॉन परिवहन में भाग लेते हैं, जबकि केवल वर्णक तंत्र I चक्रीय इलेक्ट्रॉन परिवहन में भाग लेता है। प्रकाश तंत्र I एक प्रबल अपचायक NADPH को उत्पन्न करता है प्रकाश तंत्र II एक प्रबल ऑक्सीकारक उत्पन्न करता है, जो कि जल से ऑक्सीजन का निर्माण करता है।

सारणी : वर्णक तंत्र I तथा वर्णक तंत्र II में तुलना

क्र.स.	वर्णक तंत्र I	वर्णक तंत्र II
(1)	PS I थायलेकॉइड की बाह्य सतह पर होती है।	PS I थायलेकॉइड की आन्तरिक सतह पर होता है।
(2)	इस तंत्र में आण्विक ऑक्सीजन निष्कासित नहीं होती है।	जल के प्रकाश अपघटन के परिणामस्वरूप ऑक्सीजन निष्कासित होती है।
(3)	अभिक्रिया केन्द्र P_{700} होता है।	अभिक्रिया केन्द्र P_{680} होता है।
(4)	यह चक्रीय तथा अचक्रीय दोनों प्रकाशीय फॉस्फीकरण में भाग लेता है।	यह केवल अचक्रीय फॉस्फीकरण में भाग लेता है।
(5)	यह इलेक्ट्रॉन प्रकाशतंत्र II से प्राप्त करता है।	यह जल के प्रकाशअपघटनी वियोजनीकरण से इलेक्ट्रॉन प्राप्त करता है।
(6)	यह जल के प्रकाश अपघटन से संबंधित है।	यह जल के प्रकाशअपघटन से सम्बन्धित नहीं है।

प्रकाशीय फॉस्फीकरण (Photophosphorylation) : प्रकाश अवस्था में दोनों वर्णक तंत्रों का अन्तर्सम्बन्ध सम्मिलित है। PS I तथा PS II विभिन्न प्रकाश के वर्णकों का निर्माण करते हैं। आरनॉन ने यह प्रदर्शित किया कि प्रकाश अभिक्रिया के दौरान न केवल अपचयित NADP का निर्माण तथा ऑक्सीजन का निष्कासन होता है, बल्कि ATP का निर्माण भी होता है। इस प्रकार के उच्च ऊर्जा फॉस्फेट (ATP) का निर्माण प्रकाश पर निर्भर होता है अतः इसे प्रकाशीय फॉस्फीकरण कहते हैं।

Aadhar Institute iguruji.com

TYPES OF EVOLUTION

अनुक्रमिक एवं अपसारी विकास (Sequential and Divergent Evolution)

विकास सजीवों में होने वाला वह क्रमिक रूपान्तरण है जिससे जीव जगत में विविधता स्थापित होती है। विकास की प्रक्रिया में दो मूल पैटर्न्स को देखा जा सकता है :

1. एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में आबादी में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तन किंतु इनके फलस्वरूप नई आबादियाँ नहीं बनती हैं। किंतु इस प्रकार बनी आबादियों अपनी पूर्ववर्ती आबादियों से आनुवंशिक रूप से भिन्न होती हैं। **इस प्रकार के विकास को क्रमिक विकास (sequential evolution) कहते हैं।**

2. ऐसे परिवर्तन जिनके कारण आबादियों, जातियों, वंशों व विभिन्न समूहों का विकास होता है **उन्हें अपसारी विकास कहते हैं।**

1. सूक्ष्मविकास (Microevolution)

उत्परिवर्तन, विभिन्नताओं, पुनर्योजन, प्राकृतिक वरण तथा जैनेटिक विचलन, आदि की परस्परक्रिया से होने वाले विकास को, जिसके फलस्वरूप आबादी में अपेक्षाकृत छोटे परिवर्तन होते हैं, **सूक्ष्मविकास (microevolution) कहते हैं।**

मूल रूप से सूक्ष्मविकास में आबादी की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की जीन आवृत्ति में परिवर्तन होते हैं। अतः ***सूक्ष्मविकास जाति स्तर से नीचे मेंडलीय आबादी में जैनेटिक साम्यावस्था में परिवर्तन लाता है।***

2. गुरुविकास (Macroevolution)

कुछ व्यापक अनुकूलनों के फलस्वरूप नयी प्रकार की जैविक व्यवस्थाओं के उद्भवन या विकास को गुरुविकास (macroevolution) कहते हैं। इसके फलस्वरूप नई श्रेणियों व वर्गों का निर्माण होता है। **जीवों के विकासक्रम में गुरूविकास यदा-कदा ही होता है।** यह एक विस्मयकारी सत्य है कि कुछ अपवादों को छोड़कर ये सभी जैविक व्यवस्थाएँ आज भी उसी स्थिति में मिलती हैं।

- सूक्ष्मजीवों, पौधों एवं जंतुओं के सभी संघों एवं श्रेणियों की अपनी अलग जैविक व्यवस्था होती है तथा ये सभी गुरुविकास द्वारा ही उत्पन्न हुए हैं।
- मछलियों से उभयचरों या ऐम्फिबियन्स का, तथा रेप्टाइल्स से पक्षियों एवं स्तनियों का विकास गुरुविकास के ही उदाहरण हैं।

3. अनुकूली विकिरण या महाविकास (Adaptive Radiation or Macroevolution)

विकास की वह प्रक्रिया जिसमें आबादी के विखंडन एवं जैनेटिक अपसरण द्वारा नये अनुकूली प्रकार के जीवों का उद्भवन होता है, उसे अनुकूली विकिरण (adaptive radiation) कहते हैं। **यह जाति के स्तर से ऊपर कार्य करता है।**

इसके फलस्वरूप जाति की आबादी अनेक उपसमूहों में विभक्त हो जाती है तथा इनमें से प्रत्येक में एक निश्चित अनुकूली दिशा में परिवर्तन होते हैं। **इन परिवर्तनों को अनुकूली प्रवृत्तियाँ (adaptive trends) तथा इस प्रक्रिया को अनुकूली विकिरण (adaptive radiation) कहते हैं।**

4. अनुकूली विकिरण या महाविकास की प्रक्रिया (Mechanism of Adaptive Radiation or Macroevolution)

अनुकूली विकिरण जाति स्तर से ऊपर होता है जिसके फलस्वरूप नये वंश, कुल तथा गण बनते हैं। जैविक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन उत्परिवर्तनों के कारण अचानक ही विकसित हो जाते हैं। **इन उत्परिवर्तनों को सिस्टेमिक म्युटेशन (systemic mutations) कहते हैं।**

महाविकास जीवों के उस समूह में होता है जो स्पर्धा से मुक्त किसी नये अनुकूली क्षेत्र में पदार्पण करते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को निम्न प्रकार से वर्णित कर सकते हैं :

विकास के प्रतिरूप (Patterns of Evolution)

उच्च संवर्गों में होने वाले आकारिक परिवर्तनों को समय (time) के साथ प्लॉट करके ग्राफ बनाने पर जातिउद्भवन के समान प्रतिरूप देखने को मिलते हैं। ये प्रतिरूप निम्न प्रकार से हैं :

1. अनुकूली अपसरण या अपसारी विकास (Adaptive Divergence or Divergent Evolution) : जब किसी जैवद्विकस्थान (biospace) में वर्णित आकारिक अंतरों वाली वंशपरम्पराएं (lineages) विभक्त होकर अलग-अलग अनुकूली पथों पर विकसित होती हैं तो इसे अनुकूली अपसरण या अपसारी विकास कहते हैं।

- **अपसारी विकास वंशपरम्पराओं (lineages) में भी दिखाई देता है जिनमें समान परिस्थितियों के लिए भिन्न आकारिक अनुकूलन विकसित होते हैं।**

2. अनुकूली विकिरण या विकिरण विकास (Adaptive Radiation or Radiation Evolution) : इसमें किसी आद्य समूह के विभक्त होने से अनेक वंश परम्पराएँ बनती हैं तथा ये रूपान्तरित तथा विकसित होकर नये द्विकस्थानों में विकसित हो जाती हैं। इसके फलस्वरूप अनेक अपसरण होते हैं। **इस प्रकार के विकासीय परिवर्तनों को विकिरण विकास (radiation evolution) कहते हैं।**

- **स्टेगोसिफेलियन एम्फिबियन्स तथा आद्य पूर्वजों से स्तनियों के गणों (orders) का उद्भवन अनुकूली विकिरण के ही उदाहरण हैं।**

3. समान्तर विकास (Parallel Evolution) : इस प्रकार के विकास में दो या दो से अधिक वंशपरम्पराएं समान पर्यावरण परिस्थितियों के प्रभाव से समान पथों की ओर विकसित होती हैं। इसके परिणामस्वरूप इनमें समान आकारिक परिवर्तन दिखाई देते हैं।

- आर्थोपोड्स में समांतर विकास के अनेक उदाहरण मिलते हैं। आर्थोपोड्स में अनुवंशीय या जातिवृत्तीय (phyletic) उद्भवन देखने को मिलता है। **माना जाता है कि ऐनेलिड के समान कृमियों से 2-4 पृथक वंशपरम्पराओं से आर्थोपोड जीवों का विकास हुआ।**

4. पुनरावर्ती विकास (Iterative Evolution) : पुनरावर्ती विकास में मूल प्रभव से आकारिक रूपान्तरणों के समान अनुक्रम क्रमिक रूप में प्रकट होते हैं। **उदाहरण के लिए अनियमित रूप से कुंडलित एम्मोनाइट्स कुंडलित पूर्वजों से तीन या चार बार विकसित हुए हैं।**

5. अनकूली अभिसरण या अभिसारी विकास (Adaptive Convergence or Convergent Evolution) : इस प्रकार के विकास में विभिन्न वंशपरम्पराएं पर्यावरण के समान कारकों के प्रभाव से समान आकारिकी में रूपान्तरित हो जाती हैं।

- **उदाहरण के लिए, डॉल्फिन्स तथा व्हेल (स्तनी) भी जल में रहने के लिए मछलियों के समान प्रतीत होते हैं।**

जब आकारिक रूप से विभिन्न वंशपरम्पराओं की जातियाँ एक-दूसरे के समान प्रतीत होती हैं तो इन्हें समरूपी (homeomorphs) कहते हैं।

मानव का उद्विकास (EVOLUTION OF MAN)

1. मानव का जन्तु जगत में स्थान (Systemic position Of Man is Animal Kingdom)

संघ (phylum)	- कार्डेटा (Chordata)
उपसंघ (Subphylum)	- वर्टी ब्रेटा (Vertebrata)
वर्ग (Class)	- मैमेलिया (Mammalia)
गण (order)	- प्राइमेट्स (primates)
उपगण (suborder)	- ऐन्थ्रोपाइडिया (Anthro poidea)
अवगण (Infraorder)	- कैटाराइनी (Catarrhini)
अधिकुल (Super Family)	- होमिनायडिया (Hominoidea)
कुल (Family)	- होमिनिडी (Hominidae).
वंश (Genus)	- होमो (Homo)
जाति (Species)	- सेपिएन्स (Sapiens)
उपजाति (Subspecies)	- सेपिएन्स (Sapiens)

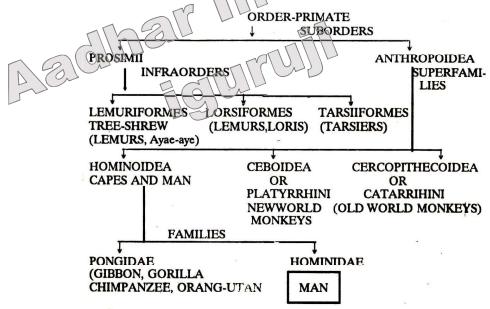

Aadhar Institute iguruji

फेट मैप [Fate map]

फेट मैप (Fate map) वह विधि है जिसके द्वारा परिपक्व अण्डे (Mature egg) या प्रारम्भिक परिवर्धित भ्रूण (Early developing embryo) का अध्ययन करते हैं, जो कि परिवर्धन (Development) के साथ-साथ ही विभिन्न क्षेत्रों (Area) तथा विभिन्न संरचनाओं (Structures) के निश्चित भाग की कार्बनिक संरचनाओं (Particular organic structure) में परिवर्तन को प्रदर्शित करता है.

- **इस प्रकार फेट मैप (Fate Map) वह चार्ट (Chart) है, जो एक विकसित होते हुए भ्रूण (Early embryo) के प्रत्येक भाग के परिवर्धित (Developing) भाग के भविष्य (Future) को प्रदर्शित करता है तथा इसकी सहायता से परिवर्धित होते हुए भ्रूण (Embryo) के भविष्य में बनने वाले विभिन्न क्षेत्रों (Region) की मैपिंग (Mapping) की जाती है.**

• फेट मैप बनाने का आरम्भन (Initiation of Fate Map) :

कुछ प्रयोगों में निषेचन (Fertilization) के पश्चात् बने जाइगोट (Zygote) को फेट मैप (Fat Map) बनाया जाता है तथा कुछ प्रयोगों (Experiments) में ब्लास्टुला अवस्था (Blastula stage) अथवा गैस्ट्रुला अवस्था (Gastrula stage) में फेट मैपिंग (Fate Mapping) की जाती है.

• फेट मैप का निर्माण (Construction of Fate Map):

फेट मैप (Fat Map) का निर्माण निम्न विधियों (Methods) द्वारा किया जाता है

(1) प्राकृतिक चिन्हों द्वारा (By Natural marking) – परिवर्धित होते हुए (Developing) एक एम्फीबियन अण्डे (Amphibion egg) के कुछ भाग (Part) में काले रंग की कणिकाएँ (Black pigments) अवस्थित (Arranged) होती हैं. जिन्हें सामान्यतः एनीमल हेमीस्फीयर (Animal hemisphere) कहा जाता है.

इस प्रकार के प्राकृतिक चिह्न (Natural marking) में पिगमेण्टेशन (Pigmentation) के आधार पर फेट मैप (Fat map) के पूर्णरूप से बनने की सम्भावना कुछ कम होती है.

(2) कृत्रिम चिन्हों द्वारा (By Artificial Marking) इस प्रकार की विधि में निम्न प्रकार से फेट मैप बनाया जाता है

(A) वाइटल डाइ स्टेनिंग विधि (Vital Dye Staining Method)-इस विधि का आविष्कार वोग्ट (Vogt) ने किया था जिसमें एम्फीबियन (Amphibian) में ब्लास्टुला (Blastula) अवस्था के विभिन्न भागों (Different Parts) को वाइटल डाईज (Vital dyes:-**nile blue sulfate, bismark brown, neutral red**) से स्टेनिंग (Staining) किया जाता है.

विधि (Method)

- इस विधि में अगर (Agar) के टुकड़े में वाइटल डाई (Vital dye) को अवशोषित (Soaking) कराया जाता है. इसके पश्चात् इस वाइटल डाई युक्त अगर (Agar) के टुकड़े को भ्रूण (Embryo) के अध्ययन किए जाने वाले वांछित भाग में अधिरोपित या एप्लाई (Apply) किया जाता है.
- इस विधि में वाइटल डाई (Vital dyes) अगर (Agar) के टुकड़े से भ्रूण (Embryo) की कोशिकाओं (Cells) में विसरित (Diffuse) हो जाता है जिससे कोशिकाएँ (Cells) अभिरंजित (Stained) हो जाती हैं.
- अभिरंजित (Staining) होने पर भ्रूण (Embryo) की कोशिकाओं (Cells) की सामान्य वृद्धि (Normal development) पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है.

Aadhar Institute iguruji

- इस विधि में अगर (Agar) के स्थान पर सेलोफेन (Cellophane) को भी अभिरंजन (Staining) हेतु उपयोग किया जा सकता है.
- अभिरंजन (Staining) के पश्चात् विकसित होते हुए भ्रूण (Early embryo) के विभिन्न भागों का अध्ययन किया जाता है.

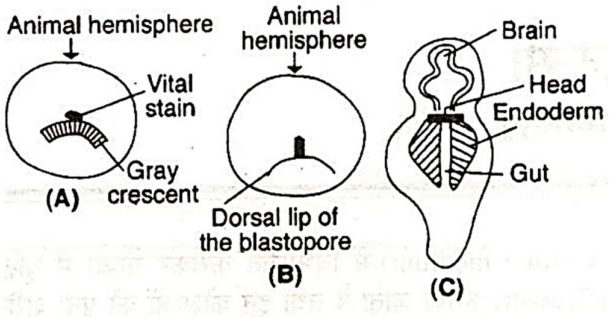

Fig. : (A to C) Showing the application of Vital Staining technique to the Gray Creasent

(B) कार्बन पार्टीकल मार्किंग (Carbon Particle Marking) - इस विधि का आविष्कार **स्प्राट (Spratt) ने किया था**. इस विधि में कार्बन कणों (Carbon particles) को मार्कर (Marker) के रूप में प्रयोग में लाया जाता है. इसे कोशिकाओं (Cells) की सतह (Surface) में इनवेस्टीगेटर (Investigator) के रूप में प्रयुक्त करते हैं. जिसके द्वारा कोशिकीय गति (Cellular movement) को फेट मैप (Fate map) में दर्शित (Draw) करते हैं.

(C) रेडियोएक्टिव लेबलिंग विधि (Radioactive Labelling Method) यह फेट मैप (Fate map) निर्माण की आधुनिक विधि है जिसमें रेडियोएक्टिव पदार्थो (Radioactive material) जैसे ट्राइटिएटेड थायमिडीन (Tritiated thymidine) का उपयोग करते हैं जिसके द्वारा कोशिका (Cell) के फेट मैप (Fate map) को दर्शित (Draw) किया जाता है.

Aadhar Institute iguruji

महत्व (Significance)

1. फेट मैप (Fate map) द्वारा अण्डे (Egg) के गैस्ट्रलेशन (Gastrulation) तथा इसके निश्चित क्षेत्रों (Particular areas) का तथा ब्लास्टुला (Blastula) के निश्चित् अंग तंत्रों (Organ systems) में परिवर्तित होने को दर्शाया जाता है.

2. फेट मैप (Fate map) के द्वारा मोलस्का (Mollusca) में जैसे डेण्टेलियम के अण्डों (Dentalium egg), प्रोटोकॉर्डेटस (Protochordates), जैसे-एम्फीऑक्सस (Amphioxus) में, साइक्लोस्टोमस (Cyclostomes) तथा मछलियों (Fishes), एम्फिबियन्स (Amphibians), पक्षी (Birds) तथा स्तनियों (Mammals) के अण्डों (Eggs) में ब्लास्टुलेशन (Blastulation) तथा गैस्ट्रलेशन (Gastrulation) के दौरान बनने वाले विभिन्न क्षेत्रों (Areas) का अध्ययन करके फेट मैप (Fate map) बनाया जा सकता है.

3. इसके द्वारा अण्डे (Egg), जाइगोट (Zygote) तथा भ्रूणीय परिवर्धन (Embryonic development) के अन्तर्गत होने वाली विभिन्न कोशिकीय परिघटनाओं का विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है.

जनन स्तरों का भविष्य (Fate of germinal layers)

प्राथमिक जनन स्तर (Germinal layers)	जनन स्तरों का भ्रूण में भविष्य		वयस्क में विकसित होने वाली संरचनाएँ
1. एक्टोडर्म (ectoderm)	1.दैहिक एक्टोडर्म (Somatic ectoderm)		त्वचा की एपिडर्मिस, अधिचर्म के व्युत्तपन्न जैसे सरीसृप के शल्क, पंख, नाखुन खुर, दांत का इनेमल, (त्वक ग्रंन्थिया नेत्र लेंस,अन्त। कर्ण, अग्र पीयूष ग्रन्थी मुख पथ व गुद पथ अस्तर)
	2. न्यूरल क्रेस्ट(Neural crest)		गेंगलियोन, संवेदी तन्त्रिकाएँ क्लोम कंकाल, एड्रीनल मेडयूला
	3. तन्त्रिकीय नाल (Meural tube)		मस्तिष्क व मेरुरज्जु, चालक तन्त्रिकाएँ, दृष्टि तन्त्रिका, रेटीना, पश्च पीयूष ग्रन्थी, मच्छलियों का पार्श्वीय धारी तन्त्र
2. एण्डोडर्म (endoerm)	आद्यान्त्र (archenteron)		मुख पथ व गुद पथ के अतिरिक्त आहार नाल का भीतरी स्तर, अग्नाश्य, यकृत फेफडे, श्वासनलिका, थॉयरॉइड, पेराथॉयराइड, थायमस ग्रन्थी,मूत्राश्य।
3. मीसोडर्म (mesoderm)	कोरडामीसोडर्म		नोटोकोर्ड
	1. एपीमीयर	(A) डर्मेटोम	डर्मिस, डेन्टीन, प्लीहा, RBC, WBC, रक्त बिम्बाणु,मछलियों केशल्क
		(B) स्क्लेरोटोम	कशेरुक दण्ड
		(C) मायोटोम	पेशियाँ (रेखित, अरेखित व हृदयी, नेत्र गोलक पेशियाँ पार्श्व कंकाल)
	2. मीसोमीयर		वृक्क, नेफ्रोन्स जनद, जनन वाहिनियाँ,एड्रीनल कॉर्टेक्स
	3. हाइपोमियर	(A) सोमेटिक	केगोसाइटिक कोशिकाएँ, एडीपोज ऊत्तक
		(B) स्प्लेंकनिक	मीसेन्ट्रीज, विसरल पेशियाँ, संयोजी ऊतक रक्त परिसंचरण तन्त्र

Aadhar Institute iguruji

भ्रूणीय प्रेरण (Embryonic Induction)

Aadhar Institute jguruji

स्पीमैन के कार्य की पृष्ठभूमि :

ऑगस्ट वीज़मैन ने जर्मप्लाज्म सिद्धान्त (germ-plasm theory) का प्रतिपादन किया। इसके अनुसार निषेचित अण्ड का केन्द्रक समजात (homogenous) नहीं होता वरन् मोजेक होता है यानि इसमें वयस्क के विभिन्न अवयवों के **आद्यांश (primordia)** एकत्रित रहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार विदलन तथा कोशिका विभाजनों के बाद मे आद्यांश अलग-अलग कोरक खण्डों (blastomeres) या कोशिकाओं में बंट जाते हैं। अन्ततः जिस कोशिका के पास जिस प्रकार का आद्यांश आता है । उसी के अनुरूप वह संरचना का निर्माण करती है।

हेन्स स्पीमैन व रॉस हैरिसन ने स्वतंत्र रूप से वीज़मैन के मोज़ेक सिद्धान्त की परीक्षा करने का प्रयास किया। उन्होंने अनुमान लगाया कि यदि आद्यांश वीजमैन के अनुसार ही व्यवस्थित होते हों तो जब भ्रूण द्विकोशिकी होते होंगे तब सम्पूर्ण जन्तु के आधे अंगों के आद्यांश (primordia) एक कोरकखण्ड में तथा शेष दूसरे में व्यवस्थित हो जाते होंगे। ऐसे में यदि किसी प्रकार दो में एक कोशिका को नष्ट कर दिया जाए तो आधा भ्रूण ही पनपना चाहिए।

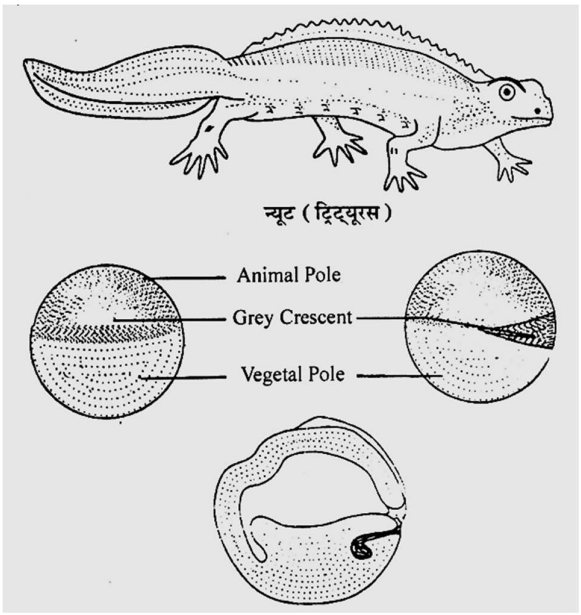

स्पीमैन ने भी इस मोज़ेक सिद्धान्त को परखने के लिए प्रयास किया। **<u>स्पीमैन ने न्यूट (newt) के भ्रूण पर अपने परीक्षण किए। न्यूट एक प्रकार का उभयचर (amphibian) जन्तु है। इसके भ्रूण जल में परिवर्धित होते हैं अतः उन्हें आसानी से देखा व संवर्धित किया जा सकता है।</u>**

न्यूट के ZYGOTE में ध्रुवता पाई जाती है। इसका एक भाग गहरे रंग का होता है तथा एक भाग हल्के रंग का होता है। निषेचन के तुरन्त बाद ही इन दो भागों में कुछ हलचल होने से एक अर्द्धचन्द्राकार भाग ऐसा बनता है जिसका रंग दोनों भागों के बीच का अर्थात् घूसर (grey) होता है। इस अर्द्धचन्द्राकार भाग को इसके रंग व आकार के आधार पर घूसर नवेन्दु (GREY CRESCENT) कहते हैं।

एक प्रयोग में स्पीमैन ने पूर्वरचनावाद के मोज़ेक सिद्धान्त को परखने के लिए कोरक खण्डों को पृथक करने (जैसा ड्रीश ने किया) के बजाय इन्हें एक बाल के फन्दे या छल्ले से पिचकाकर दो भागों में बांटने का प्रयास किया। इस प्रयास में उन्होंने पाया कि प्रारम्भ में ZYGOTE बाल के छल्ले या फन्दे (loop of hair) से गुब्बारे की तरह दो भागों में बंट गया। इनके बीच सिर्फ एक संकरा कोशिका द्रव का सेतु रह गया है।

- स्पीमैन ने बाल के फन्दे को इतना कसा कि एक भाग का कोशिकाद्रव दूसरे भाग में न जा सके। फन्दा कसने से एक भाग में ZYGOTE का केन्द्रक चला गया तथा दूसरा केन्द्रकविहीन रह गया। केन्द्रकविहीन भाग में कोई विदलन नहीं हुआ है परन्तु केन्द्रकयुक्त भाग में विदलन होने से क्रमशः 2-4-8-16 कोरक खण्ड बने।
- विदलन की (16 या 32 कोशिका अवस्था) में स्पीमान ने फन्दे को इस प्रकार ढीला किया कि छल्ले के बीच में जुड़े कोशिका-द्रव से एक केन्द्रक दूसरे केन्द्रकविहीन भाग में चला गया तथा इस भाग में भी विभाजन प्रारम्भ हो गया है।
- कुछ समय बाद दो सामान्य भ्रूण बन गए।

Aadhar Institute iguruji

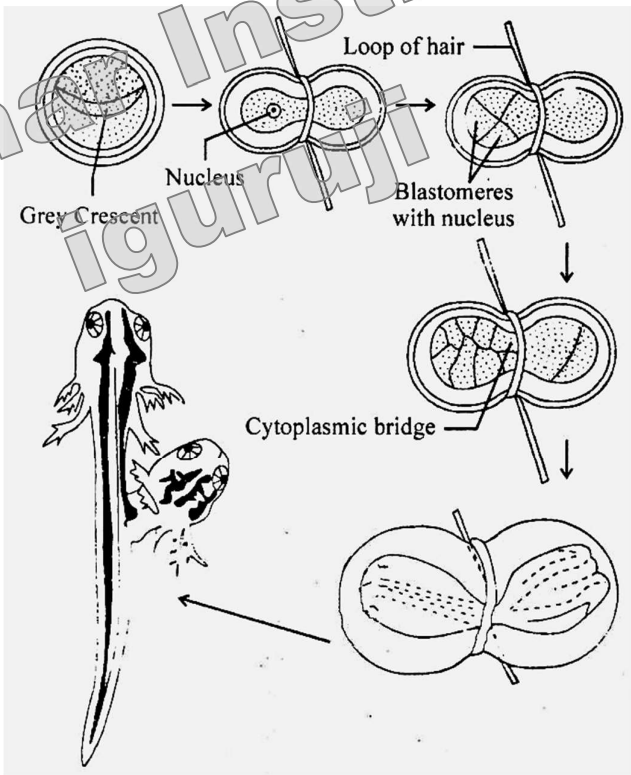

दूसरे प्रयोग में स्पीमैन ने ZYGOTE के संकुचन का तल (plane) बदल दिया। **जहाँ पहले प्रयोग में संकुचन से दोनों भागों में धूसर-नवेन्दु का लगभग आधा-आधार भाग आ गया था वहीं दूसरे प्रयोग में उन्होंने फन्दे को इस प्रकार व्यवस्थित किया कि धूसर नवेन्दु (GREY CRESCENT) एक ही भाग में चला गया तथा दूसरे में उसका अत्यन्त अल्पांश ही रह गया या कोई अंश न रह पाया।**

- इस बार भी प्रयोग में वही सब किया गया। एक भाग में केन्द्रक चला गया। इस भाग में विदलन हुए, कुछ समय बाद दूसरे भाग में भी केन्द्रक जाने दिया गया जिससे वहाँ भी विदलन शुरू हुआ परन्तु आश्चर्यजनक परिणाम यह था कि एक भाग **(जिसमें धूसर-नवेन्दु था)** से न्यूट का सामान्य भ्रूण बना परन्तु दूसरे भाग में कोशिकाओं का एक अव्यवस्थित पिण्ड ही बना जिसे स्पीमैन ने जर्मन भाषा में बाँचस्टक (Bauchstuck = belly piece) नाम दिया। **इसमें फुफ्फुस, आन्त्र व यकृत कोशिकाएँ थी परन्तु कंकाल, तन्त्रिका कोशिकाएँ अनुपस्थित थीं।** प्रतिरोपण कई प्रकार के हो सकते हैं। ये प्रकार इस तथ्य पर निर्भर हैं कि दाता (donor) जन्तु या भ्रूण कौन है तथा ग्राही या आतिथेय (host) कौन है?
- उदाहरणार्थ जब एक ही भ्रूण से एक अंश काट कर उसी भ्रूण में अन्यत्र प्रतिरोपित कर दिया जाए तो इसे **स्वरोपित प्रतिरोपण (autoplastic transplant)** कहा जाता है।

- यदि एक ही जाति (species) के एक जन्तु के भ्रूण से उसी जाति के भ्रूण में प्रतिरोपण किया जाए तो इसे **समरोपित प्रतिरोपण (homoplastic) कहते हैं।**
- यदि एक ही वंश (genus) की दो जातियों के भ्रूणों के बीच प्रतिरोपण हो तो इसे **विषमरोपित प्रतिरोपण (heteroplastic) कहते हैं।** यदि दो दूर के सम्बन्धों वाली जातियों के भ्रूणों के बीच प्रतिरोपण हो तो इसे **पररोपित प्रतिरोपण (xenoplastic) प्रतिरोपण कहते हैं।**
- विभिन्न प्रकृति के ग्राफ्ट रंजन प्रकृति में भी भिन्न होने के कारण भविष्य में भिन्न प्रकार से रंजित होते हैं अतः यह पता लगाया जा सकता है कि कौनसा भाग प्रतिरोपित ग्राफ्ट से विकसित हुआ है तथा कौनसा ग्राही से परिवर्धित हुआ है।

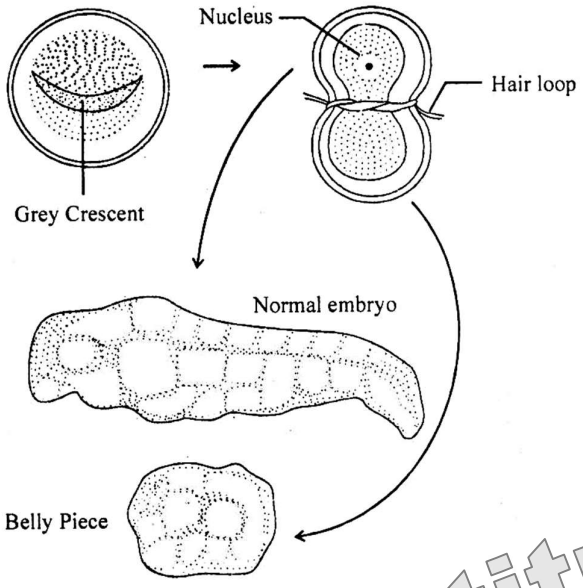

स्पीमैन के इन प्रयोगों से महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

1. स्पीमैन के उपरोक्त दो प्रयोगों से मोज़ेक सिद्धान्त का खण्डन हुआ। यदि वीजमैन का विचार भ्रूण परिवर्धन के विषय में सही रहा होता तो पहले प्रयोग में इस दूसरे भ्रूण का सम्पूर्ण परिवर्धन न हुआ होता जिसमें बाद में विभाजन प्रारम्भ हुए वरन् इसका सिर्फ कुछ भाग ही पनपता क्योंकि सोलह कोशिकाओं में समस्त आद्यांशों के बंटने का अर्थ है दूसरी ओर आई एक कोशिका में अब भ्रूण के निर्माण की 1/16 जानकारी ही है ।

2. उपरोक्त प्रयोगों से यह तो स्पष्ट होता है कि दोनों प्रयोगों से भिन्न परिणाम प्राप्त होने का कारण सम्भवतः घूसर नवेन्दु (GREY CRESCENT) है क्योंकि पहले प्रयोग में यह दोनों भागों में उपलब्ध था जिससे पूर्ण या सामान्य दो भ्रूण बने जबकि दूसरे प्रयोग में यह घूसर नवेन्दु (GREY CRESCENT) जिस भाग में गया वह तो सामान्य भ्रूण के रूप में परिवर्धित हुआ परन्तु इससे विहीन भाग से असामान्य भ्रूण (बैली पीस) परिवर्धित हुआ।

3. यह घूसर नवेन्दु (GREY CRESCENT) सम्भवतः कुछ इस प्रकार का परिवर्धित होते भ्रूण पर डालता है कि भ्रूण की विभिन्न कोशिकाएँ ठीक से संगठित होती हैं। इस परिकल्पना की पुष्टि करना आवश्यक था। **इस तथ्य की पुष्टि के लिए, कि क्या वास्तव में भ्रूण की कुछ कोशिकाएँ अन्य कोशिकाओं को कोई विशेष संरचना बनाने के लिए प्रेरित करती हैं, स्पीमैन ने प्रतिरोपण (transplantation) प्रयोग किए।**

Aadhar Institute iguruji

- **ये तीनों तीन जोड़ी अण्डनिक्षेपक कपाट (ovipositor) का निर्माण करते हैं।**
- ये मैथुन क्रिया, अण्ड निक्षेपण और अण्ड कवच की रचना में सहायक होते हैं।
- आठवें अधरक के मध्य में एक कठक शुक्रग्राही अंकुरक (spermathecal papilla) बनाता है, जिस पर शुक्रग्राही छिद्र खुलता है।

जीवन-वृत्त (Life History)

[I] मैथुन क्रिया (Copulation)

लैंगिक रूप से परिपक्व नर और मादा तिलचट्टे मार्च से सितम्बर तक रात्रि में संगम करते हैं। मैथुन क्रिया में नर कीट अपने शुक्राणुओं के पैकेट अर्थात् शुक्राणुधरों को सीधा मादा के **जननिक कोष Genital pouch** में स्थानान्तरित कर देता है।

परिपक्व मादा तिलचट्टा संगम करने हेतु नर को आकर्षित करने के लिये एक विशिष्ट, वाष्पशील एवं गंधयुक्त लिंग-आकर्षक या फेरोमॉन (pheromone) छोड़ती है।

नर ऐंटिनी में स्थित रसायन ग्राहियों द्वारा इस आकर्षक पदार्थ का पता लगाता है।

[II] शुक्राणुधर का निर्माण एवं वीर्यसेचन (Spermatophore formation and insemination)

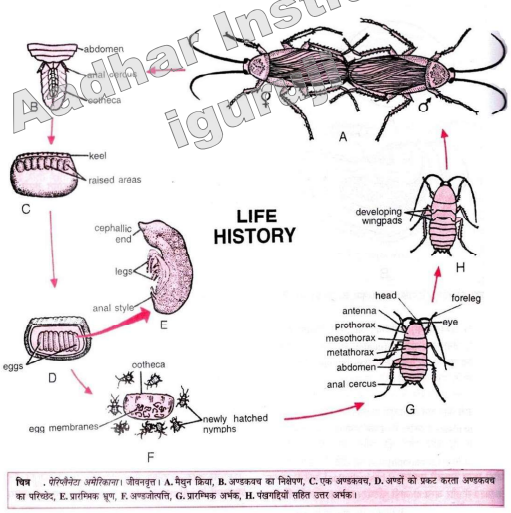

चित्र . *पेरिप्लैनेटा अमेरिकाना*। जीवनवृत्त। **A.** मैथुन क्रिया, **B.** अण्डकवच का निक्षेपण, **C.** एक अण्डकवच, **D.** अण्डों को प्रकट करता अण्डकवच का परिच्छेद, **E.** प्रारम्भिक भ्रूण, **F.** अण्डजोत्पत्ति, **G.** प्रारम्भिक अर्भक, **H.** पंखगद्दियों सहित उत्तर अर्भक।

- नर कीट के वृषण में उत्पन्न हुए शुक्राणु संचयन हेतु शुक्राशयों (seminal vesicles) में आते हैं।
- मैथुन के समय ये शुक्राणु स्खलन नली (ejaculatory duct) में आ जाते हैं, जहाँ ये तुरन्त ही यूट्रिकुली ब्रिविओरेस (utriculi breviores) द्वारा स्रावित एक पोषक तरल में मिल जाते हैं।
- इसी समय यूट्रिकुली मैजोरस (utriculi mojores) से निकला स्राव इस मिश्रण के चारों ओर एक स्तर बनाता है।
- जो कठोर होकर स्पर्मेटोफोर का अन्दर का स्तर बनाता है जैसे ही यह एक स्तर वाला शुक्राणुधर पीछे की ओर सरकता है, स्खलन नली की भित्ति इसके चारों ओर मध्य स्तर का स्रवण कर देती है।
- मैथुन क्रिया में यह दो पर्तों वाला शुक्राणुधर मादा के जननिक कोष के अन्दर शुक्राणुग्राही अंकुरक (spermathecal papilla) पर निक्षेपित (deposit) कर दिया जाता है।

यहाँ पर फैलिक ग्रन्थि (phallic gland) इसके चारों ओर अपना स्राव विसर्जित करती है जो सूखकर कठोर बन जाने पर शुक्राणुधर का सबसे बाहर का तीसरा स्तर बनाता है।

[III] निषेचन एवं अण्डकवच का निर्माण (Fertilization and formation of ootheca)

- प्रत्येक परिपक्व अण्डा लम्बा एवं अण्डाकार होता है। **प्रत्येक अण्डाशय से एक समय में एक-एक करके कुल 16 अण्डे एक साथ योनि से होकर जननिक कोष के प्रघाण (vestibulum) में आ जाते हैं।**
- जैसे-जैसे ये अण्डे प्रघाण में आते जाते हैं, वैसे-वैसे ही शुक्राणुग्राही से आए शुक्राणुओं द्वारा उनमें निषेचन हो जाता है।
- अण्डकवच में होने वाले एक अति छोटे, सूक्ष्म छिद्र (micropyle) द्वारा एक शुक्राणु अण्डकवच में प्रवेश करके निषेचन क्रिया कर देता है।
- निषेचित अण्डे कोलैटीरियल ग्रन्थियों के स्राव से घिर जाते हैं जो सूख कर एक अण्डकोष या अण्डकवच का निर्माण करता है।
- इस प्रकार अण्डकवच के अन्दर 16 अण्डे ओवीपॉजीटर कपाटों की सहायता द्वारा एक सिगरेट-केस में लगी सिगरेटों की भाँति 8-8 की दोहरी पंक्ति में व्यवस्थित हो जाते हैं।
- एक अण्डकवच में पूर्ण रूप से निर्माण होने में लगभग दो दिन का समय लग जाता है। इसी अन्तराल में अण्डकवच उदर से पीछे की ओर निकलने लगता है।
- एक मादा तिलचट्टे द्वारा लगभग 15 अण्डकवच दिए जाते हैं।
- एक अण्डकवच लगभग 8 मिमी लम्बा होता है। इसका आकार एक ऐसे आयताकार थैले की भाँति होता है, जिसके ऊपरी तट पर दाँतेदार नौतल (keel) की झालर होती है और अन्दर बन्द 16 अण्डों की दो पंक्तियों के कारण प्रत्येक पार्श्वीय भित्ति आठ लम्बे क्षेत्रों में उभरी होती है।
- अण्डकवच की विशिष्ट आकृति जननिक कोष की भित्तियों के आन्तरिक विन्यास (configuration) और अण्डनिक्षेपी कपाटों (ovipositor valves) की क्रिया द्वारा बनती है।

[IV] अण्डकवच को स्थापित करना (Laying of ootheca)

मादा कॉकरोच उदर के छोर से बाहर निकले अण्डकवच को कई दिनों तक धारण किए रहती है और अन्त में उसे एक गर्म, सुरक्षित एवं अन्धेरे स्थान में निक्षेपित कर देती है।

[V] भौणिक परिवर्धन (Embryonic development)

- प्रत्येक अण्डे में कीटों की विशेषतानुसार पहले सतही विदलन (superficial cleavage) होता है, जिसके फलस्वरूप ब्लेस्टुला (blastula) बनता है। इसके बाद गैस्ट्रुला (gastrula) बनता है।

- गैस्ट्रुला एक भ्रूण में विभेदित हो जाता है, जो एक उल्व गुहिका (amniotic cavity) द्वारा कोरक-चर्म (blastoderm) से पृथक् हो जाता है।
- इसके तीनों जन स्तरों—एक्टोडर्म (ectoderm), मीजोडर्म (mesoderm), और एण्डोडर्म (endoderm), से अर्भक (nymph) के विभिन्न अंगों का निर्माण होता है।

[VI] अण्डजोत्पत्ति (Hatching)

- जब अण्डजोत्पत्ति होती है, तो अण्डकवच का पृष्ठ-नौतल (keel) फट जाता है और अण्ड-कलाओं (egg-membranes) को अण्डकवच के अन्दर ही छोड़ कर **अर्भक (nymphs)** बाहर निकल जाते हैं।
- इनमें एक वयस्क जन्तु के लगभग सभी लक्षण पाए जाते हैं, तथापि परिमाण एवं रंग में भिन्नता होने के साथ ये लैंगिक रूप से अपरिपक्व होते हैं और इनमें पंखों का अभाव होता है।

[VII] कायान्तरण (Metamorphosis)

तिलचट्टे का परिवर्धन सामान्य और प्रत्यक्ष होता है और इसमें अपूर्ण या धीमा कायान्तरण होता है, जिसे पौरोमेटाबोली (paurometaboly) कहते हैं।

अण्डजोत्पत्ति के तुरन्त बाद अर्भक में प्रथम निर्मोचन (moulting) या निर्मोक उत्सर्जन (ecdysis) होता है और उसके पश्चात् एक के बाद एक करके **दस से बारह निर्मोचन होते हैं।** ज्यों ही अर्भक परिवर्धन आगे बढ़ता है, पंखों की गद्दियाँ उभर जाती हैं, शरीर का परिमाण बढ़ता जाता है, रंग गहरा होता जाता है और **अन्त में पूर्णरूपेण विकसित पंखों एवं जननेन्द्रियों के साथ वयस्क का पूरा रूप बन जाता है।**

7. Frog & Rabbit के अंगों की औतिकी

मेंढक की त्वचा (SKIN OF FROG)

- मेंढक की त्वचा चिकनी, नम, अवपंकी (slimy) एवं शरीर पर ढीले रूप से चढ़ी होती है। बड़ी फ्लास्क के आकार की श्लेष्मल-ग्रन्थियों की उपस्थिति इसकी विशेषता होती है।
- इसकी खड़ी काट (vertical section) दो सुस्पष्ट क्षेत्र प्रदर्शित करती है : (i) बाह्य अधिचर्म या एपिडर्मिस, और (ii) आन्तरिक चर्म या डर्मिस।

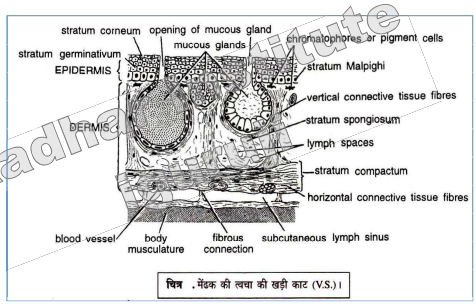

चित्र . मेंढक की त्वचा की खड़ी काट (V.S.)।

1. एपिडर्मिस (Epidermis) : यह स्तरित शल्की एपिथीलियम (stratified squamous epithelium) की बनी बाह्य पतली एक्टोडर्मल परत है जो 6 से 12 कोशिका तक गहरी होती है।

A. सबसे बाहरी एक या दो कोशिकीय परतें **किण स्तर या स्ट्रेटम कॉर्नियम (stratum corneum)** बनाती हैं। इसकी कोशिकायें अत्यन्त चपटी, मृत, केन्द्रक-विहीन होती हैं और इनका कोशिकाद्रव्य या साइटोप्लाज्म (cytoplasm) एक शृंगी प्रोटीन किरेटिन (keratin) में बदल जाता है।

यह शृंगी या किरेटिनीकृत (keratinized) परत समय-समय पर (periodically) बड़े-बड़े टुकड़ों में निर्मोचित (moulted) या झड़ती रहती है।

B. गहनतर आंतरिक परतों की अनियमित रूप से बहुफलकीय (polyhedral) कोशिकायें अंकुरण स्तर या स्ट्रेटम ज़रमिनेटिवम **(stratum germinativum) बनाती हैं।**

C. **इसकी आधारीय या अन्तरतम कोशिकायें** बड़े केन्द्रक-युक्त, घनाकार (cuboidal) या स्तम्भाकार (columnar) होती हैं और **मैलपीगी स्तर या स्ट्रेटम मैलपीगी (stratum Malpighi) कहलाती हैं।** यह एक आधारकला (basement membrane) पर स्थित होती हैं।

मैलपीगी स्तर की कोशिकायें समसूत्रण (mitosis) के द्वारा एपिडर्मिस की नयी कोशिकाओं का निर्माण करती हैं।

2. डर्मिस (Dermis) :

- एपिडर्मिस के नीचे स्थित संयोजी ऊतक की परत **कोरियम (corium) या डर्मिस** कहलाती है। **यह त्वचा का बड़ा भाग बनाती है।**
- यह रुधिर केशिकाओं (blood capillaries), तन्त्रिका और पेशी तन्तुओं, ऊर्ध्वाधर संयोजी-ऊतक तन्तुओं, वर्णक कोशिकाओं जो मेलैनोफोर (melanophores) या क्रोमैटोफ़ोर (chromatophores) कहलाती हैं, तथा बड़ी प्लास्क के आकार की एपिडर्मल ग्रन्थियों से युक्त होती हैं जो इसमें धंसी रहती हैं।
- प्रत्येक ग्रन्थि एक छोटी संकरी वाहिनी के द्वारा त्वचा के पृष्ठतल पर खुलती है। बहुत-सी ग्रन्थियाँ श्लेष्मा (mucus) स्रावित करती हैं जो त्वचा की सतह को नम और फिसलनदार रखता है।
- **एपिडर्मिस के ठीक नीचे, डर्मिस ढीले संयोजी ऊतक से बनी होती है जो स्पंजी स्तर या स्ट्रेटम स्पांजियोसम (stratum spongiosum) कहलाता है।**
- आन्तरिक गहरा भाग मोटे पूलों या बन्डलों में व्यवस्थित कॉलेजन तन्तुओं (collagen fibres) से युक्त घने संयोजी ऊतक से बना होता है, **अतः यह सघन स्तर या स्ट्रेटम कॉम्पैक्टम कहलाता है।**

खरगोश की त्वचा (SKIN OF RABBIT)

रोमों, तैल-ग्रन्थियों और स्वेद-ग्रन्थियों की उपस्थिति स्तनधारियों की त्वचा की विशेषता होती है। लेकिन, इनमें से कोई भी या सभी अनुपस्थित भी हो सकते हैं।

खरगोश की त्वचा की खड़ी काट (V.S.) दो भिन्न प्रदेश (regions) प्रदर्शित करती है : (i) बाह्य अधिचर्म या एपिडर्मिस और (ii) आन्तरिक चर्म या डर्मिस ।

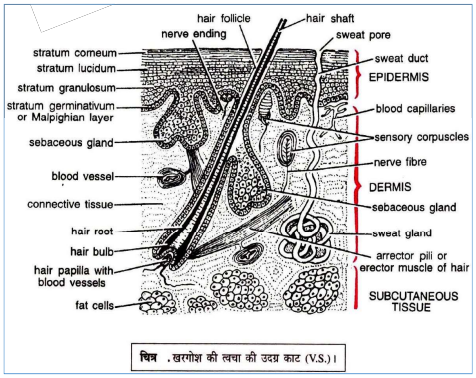

चित्र .खरगोश की त्वचा की उदग्र काट (V.S.)।

1. अधिचर्म या एपिडर्मिस (Epidermis) : **यह स्तरित शल्की एपिथीलियम की बनी बाह्य एक्टोडर्मल प्रदेश है।**

दो स्पष्ट क्षेत्रों (zones) से बनती है : (a) गहरा जीवित मैलपीगी तथा (b) ऊपरी मृत शृंगित।

(a) मैलपीगी क्षेत्र (Malpighian zone) : भीतरी मैलपीगी स्तर या **स्ट्रेटम मैलपीगी (stratum Malpighi) जीवित कोशिकाओं का बना होता है** जो 3 स्तरों में व्यवस्थित होता है।

(i) अंकुरण स्तर या स्ट्रेटम जर्मिनेटिवम (Stratum germinativum) : यह सबसे भीतरी स्तर है जो डर्मिस द्वारा स्रावित आधारकला (basement membrane) के संपर्क में होता है। यह स्तम्भाकार (columnar) कोशिकाओं की केवल एक पंक्ति का बना होता है। **समसूत्रण विभाजन (mitosis) द्वारा अंकुरण स्तर से नई कोशिकायें निरन्तर बनकर ऊपर की ओर बढ़ती रहती हैं। सभी अधिचर्मीय ग्रन्थियाँ और शृंगी रचनाएँ इसी स्तर से उत्पन्न होते हैं।**

(ii) शूलमय स्तर या स्ट्रेटम स्पाइनोसम (Stratum spinosum) : अंकुरण स्तर के ऊपर स्थित जो कोशिकाद्रव्यी सेतुओं द्वारा परस्पर जुड़ी रहती हैं।

(iii) कणी स्तर या स्ट्रेटम ग्रैन्युलोसम (Stratum granulosum) : यह शूलमय स्तर के बाहर स्थित संक्रामी स्तर (transitional layer) है। इनके कोशिकाद्रव्य में किरेटोहायलिन कण (karatohyalin granules) पाये जाते हैं।

(b) शृंगित क्षेत्र (Cornified zone) : **एपिडर्मिस का बाहरी क्षेत्र अधिक मोटा है।** यह चपटी, किरेटिनीकृत केन्द्रक-विहीन, मृत कोशिकाओं से बना होता है **जो 2 स्तरों में व्यवस्थित होती हैं।**

(i) स्वच्छ स्तर या स्ट्रेटम ल्यूसीडम (Stratum lucidum) : यह केवल हथेलियों और तलवों में कणी स्तर के ऊपर पाया जाता है। इसकी कोशिकाएँ **समांगी (homogeneous)** अभिरंजन-अक्षम **(non-stainable)** तथा अस्पष्टतया मृत होती हैं। इनके कोशिकाद्रव्य में इलीडिन (eleidin) नामक प्रभासी कण होते हैं जो किरेटोहायलिन के विबंधन से बनते हैं।

(ii) किण स्तर या स्ट्रेटम कॉर्नियम (Stratum corneum) : यह सबसे बाहरी या सतही स्तर है। **यह चपटे, मृत, चमकीले शल्कों (scales) से बनता है जो एक शृंगी प्रोटीन (scleroprotein) किरेटिन (keratin) के जमा होने से मृत एवं कठोर होते हैं।** ये शल्क घर्षण के द्वारा टूटते या पृथक् होते रहते हैं।

2. चर्म या डर्मिस (Dermis) : यह नीचे स्थित पेशियों को एपिडर्मिस से जोड़ती है। यह कड़ी और तंतुमय अंतराली (areolar) संयोजी ऊतक से बनी होती है।

रोमपुटक या हेयर फॉलिकिल्स (hair follicles), स्वेद व तैल ग्रन्थियाँ, रुधिर वाहिनियाँ, तन्त्रिकायें, वर्णक कोशिकायें पेसीनियन कणिकायें (pacinian corpuscles) और वसा निक्षेप (fat deposits) डर्मिस में फँसे पाये जाते हैं।

(a) रोम (Hair) : रोम केवल स्तनधारियों की त्वचा का एक प्रमुख लक्षण है जो शरीर-तल पर मुक्त रूप से प्रक्षेपित होते हैं। ये एपिडर्मल गों में बनते हैं जो रोम-पुटक (hair follicles) कहलाते हैं, तथा जो डर्मिस में एपिडर्मिस के अन्तर्वलन (inturnings) होते हैं।

प्रत्येक रोम-पुटक से **अरेखित या चिकने पेशी तन्तुओं का एक बन्डल** तिर्यक रूप में निकलता है **यह उर्ध्व या ऐरेक्टर पिलाई (arrector pili) कहलाता है। इसके संकुचन से रोम खड़े हो जाते हैं।**

(b) तैल ग्रन्थियाँ (Sebaceous glands) : प्रत्येक रोमपुटक में एक शाखित, कोषाकार तैल ग्रन्थि खुलती है। इसके तैलीय स्राव को सीबम (sebum) कहते हैं जो रोमों को चिकनाई प्रदान करता है। **तैल ग्रन्थियाँ एपिडर्मल मैल्पीगी स्तर के अन्तर्वलन से बनती हैं।**

(c) स्वेद ग्रन्थियाँ (Sweat glands) : ये सरल नलिकाकार ग्रन्थियाँ हैं। **यह भी मैल्पीगी स्तर के अंतर्वलन से बनती हैं।** इनके भीतरी भाग कुंडलित रहते हैं, जबकि इनकी लम्बी, पतली, ऊर्ध्वाधर या खड़ी वाहिनियाँ त्वचा की सतह पर स्वेद छिद्रों (sweat pores) द्वारा खुलती हैं। इनका स्राव स्वेद या पसीना (sweat) कहलाता है। इसमें यूरिया, अकार्बनिक लवण और जल में घुली CO_2 होती है। यह उत्सर्जन एवं शरीर के ताप-नियंत्रण का कार्य करता है।

आहार नाल की सामान्य संरचना

(GENERAL STRUCTURE OF ALIMENTARY CANAL)

कशेरुकियों की आहार नाल या पाचन नली के विभिन्न क्षेत्र चार मूल और स्पष्ट संकेन्द्री स्तरों या आवरणों से बनते हैं।

अन्दर से आरम्भ करने पर वे इस प्रकार होते हैं :

(i) श्लेष्मिका या म्यूकोसा (mucosa),
(ii) अधःश्लेष्मिका या सबम्यूकोसा (submucosa),
(iii) पेशीय आवरण या मस्क्यू लर कोट (muscular coat) और
(iv) लसीकला या सिरोसा (serosa)।

ये आहार नाल के अलग-अलग क्षेत्रों में विभिन्न रूप से रूपान्तरित हो जाते हैं ।

1. श्लेष्मिका या म्यूकोसा (Mucosa) : यह सबसे भीतर का आवरण या श्लेष्मल कला (mucous membrane) है। यह विभिन्न रूपों में वलित होकर विभिन्न प्रकार के अंकुरी गर्त एवं ग्रन्थियाँ बनाती है। म्यूकोसा मुख्य रूप से स्रावण और अवशोषण का कार्य करती है। आगे चलकर यह फिर तीन निम्नलिखित स्तरों से बनती है :
(a) एपिथीलियम (Epithelium) : सबसे अन्दरिक स्तर सामान्यतः साधारण स्तम्भाकार एपिथीलियम का होता है।
(b) लैमिना प्रोप्रिया या कोरियम (Lamina propria or corium) : यह ढीले संयोजी ऊतक की एक पतली परत होती है जो रुधिर केशिकाओं और तंत्रिकाओं से युक्त होती है।
(c) मस्क्यू लेरिस म्यूकोसी (Muscularis mucosae) : यह आन्तरिक वृत्ताकार और बाह्य अनुदैर्घ्य चिकने पेशी तन्तुओं की एक संकरी पट्टी होती है। **यह म्यूकोसा को सबम्यूकोसा से अलग करती है।**

2. अधःश्लेष्मिका या सबम्यूकोसा (Submucosa) : यह संयोजी ऊतक की परत होती है जिसमें बड़ी रुधिर वाहिकायें, लसीका वाहिनियाँ (lymphatics) और तंत्रिकायें पायी जाती हैं।

3. पेशीय आवरण या मस्क्युलर कोट (Muscular coat) : पेशीय आवरण चिकने पेशीय तन्तुओं का बना होता है जो दो स्पष्ट परतों में व्यवस्थित होते हैं : आन्तरिक वृत्ताकार (circular) तथा बाह्य अनुदैर्घ्य (longitudinal)।

पेशीय आवरण का कार्य भोजन को पाचक रसों के साथ मिलाना और उसे संकुचन की क्रमाकुंचक तरंगों (peristaltic waves) के द्वारा आगे की ओर ढकेलना होता है।

TOPIC: - Fungi:

कवकों के सामान्य लक्षण (General Characteristics of Fungi)

(1) कवक सर्वव्यापी हैं। ये जल, थल तथा वायु में, जहाँ भी जीवन सम्भव है, लगभग उन सभी आवासों में पाये जाते हैं। कुछ जलीय कवक (aquatic fungi) अलवणजल तथा समुद्र में पाये जाने वाले जीवित अथवा सड़े-गले कार्बनिक पदार्थों में पाये जाते हैं। अनेक स्थलीय कवक मनुष्यों, जन्तुओं व पौधों को संक्रमित करते हैं।

(2) कवकों का पादप काय (थैलस) शाखित एवं तन्तुमय कवकतन्तुओं (hyphae) से बना होता है। **कवकतन्तुओं** की सघन वृद्धि से एक जाल सदृश्य संरचना बनती है जिसे **कवकजाल (mycelium)**

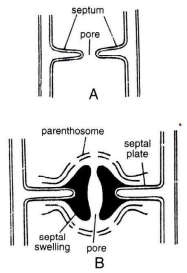

चित्र A-B. पट छिद्र (Septal pores) : A. सरल छिद्र, B. डोलिछिद्री पट (dolipore septum)।

कहते हैं। कवकतंतु यदि परपोषी कोशिकाओं के अन्दर प्रवेश करता है तो इसे **अंतःकोशिक कवकजाल (intracellular mycelium)** कहते हैं। इसके विपरीत, अनेक कवकतंतु कोशिका के अन्दर प्रवेश न करके दो कोशिकाओं के बीच में वृद्धि करते हैं। इस प्रकार के कवकतंतु अंतरकोशिक (intercellular) कहलाते हैं।

(3) कवकतन्तु पटहीन (aseptate) व संकोशिक (coenocytic; जैसे फ़ाइकोमाइसिटीज़ में) अथवा पटयुक्त (septate) व एक, द्वि अथवा बहुकेन्द्रकी (जैसे ऐस्कोमाइसिटीज़, बेसीडियोमाइसिटीज़ व ड्यूटेरोमाइसिटीज़ में) होते हैं।

(4) पट प्रायः छिद्रयुक्त होते हैं। बेसीडियोमाइसिटीज़ को छोड़कर सभी समूहों में पट छिद्र सरल (simple) होते हैं। (चित्र A)। बेसीडियोमाइसिटीज़ में डोलछिद्री पट (dolipore septa) पाये जाते हैं। ऐसे छिद्रों के दोनों ओर एक दोहरी कलामय संरचना होती है जिसे पट **छिद्र आच्छद (septal pore cap) अथवा पैरेन्थोसोम (parenthosome)** कहते हैं (चित्र B)। ये पट छिद्र एक प्रकार का कपाट (valve) बनाते हैं।

(5) श्लेष्म फफूंद (slime molds) को अपवाद स्वरूप छोड़कर अन्य सभी कवकों में जीवद्रव्य एक सुस्पष्ट कोशिका भित्ति से घिरा रहता है। कवक सेलुलोस (fungal cellulose), जिसे काइटिन (chitin) भी कहते हैं, कोशिका भित्ति का मुख्य घटक है। कुछ निम्न श्रेणी के कवकों जैसे ऊओमाइसिटीज़ (Oomycetes) में कोशिका भित्ति सेलुलोस व ग्लौकोन (glaucon; ग्लूकोस का बहुलक) से निर्मित होती है। कोशिका

भित्ति से अन्दर की ओर प्लैज्मा झिल्ली (plasmalemma) होती है जो कवकतंतु में घुलनशील पदार्थों के आवागमन को नियन्त्रित करती है।

(6) कवकतन्तुओं में रंगहीन, धानीयुक्त कोशिकाद्रव्य पाया जाता है। इसमें **अंतर्द्रव्यी जाल (endoplasmic reticulum),** माइटोकॉन्ड्रिया, राइबोसोम, गॉल्जीकाय के अतिरिक्त अनेक अजैव पदार्थ (जैसे संचित खाद्य पदाथ) पाये जाते हैं (चित्र 2)।

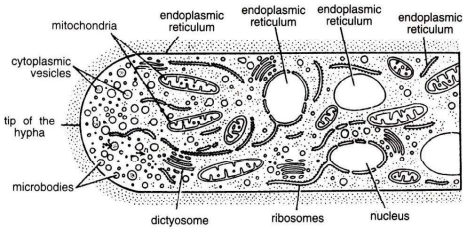

चित्र कवकतन्तु (Hypha) : संरचना का आरेखी निरूपण (diagrammatic representation)।

कवकों में पाये जाने वाले माइटोकॉन्ड्रिया की संरचना उच्च वर्गों के माइटोकॉन्ड्रिया के समान ही होती है। कवकतन्तु की कोशिकाओं में एक बड़ी अथवा अनेक छोटी-छोटी रसधानियाँ (vacuoles) होती हैं। प्रत्येक रसधानी के चारों ओर एक पतली झिल्ली होती है जिसे **टोनोप्लास्ट (tonoplast)** कहते हैं।

(7) कवकों में क्लोरोफिल का अभाव होता है परन्तु कैरोटिनॉइड (carotenoids) सामान्य रूप से पाये जाते हैं। इनमें भोजन का संचय ग्लाइकोजन (glycogen) के रूप में होता है।

(8) प्रत्येक कोशिका में एक, दो अथवा अधिक यूकेरियोटी (eukaryotic) केन्द्रक पाये जाते हैं। कवकतन्तु सम अथवा विषमकेन्द्रकी (homo-or heterokaryotic), अगुणित (haploid), द्विकेन्द्रकी (dikaryotic) अथवा द्विगुणित (diploid) होते हैं (द्विगुणित प्रावस्था प्रायः अल्पकालिक होती है)। प्रत्येक केन्द्रक में एक सुसंगठित केन्द्रिक (nucleolus) होता है।

(9) उच्च श्रेणी के कवक (जैसे ऐस्कोमाइसिटीज़, बेसीडियोमाइसिटीज़ व ड्यूटेरोमाइसिटीज़) अचल (irnmotile) होते हैं। इनमें जीवन-चक्र की किसी भी अवस्था में चल कोशिकाएँ (motile cells) नहीं पाई जाती हैं। परन्तु निम्न श्रेणी के वर्ग फ़ाइकोमाइसिटीज़ में जनन कोशिकाएँ (युग्मक तथा अलैंगिक चलबीजाणु) एक अथवा द्विकशाभिक होती हैं।

(10) कशाभिकाएँ दो प्रकार की होती हैं :

(i) प्रतोद कशाभिका (whiplash flagellum)—इनकी सतह चिकनी होती है तथा ये सामान्य 9 + 2 संगठन प्रदर्शित . करते हैं

(ii) कूर्च कशाभिका (tinsel flagellum) इन कशाभिकाओं की सतह पर अनेक सूक्ष्म रोम सदृश्य पार्श्वसूत्र (mastigoneme) पाये जाते हैं। पार्श्व सूत्रों की उत्पत्ति कशाभिका के अक्ष सूत्र से होती है (चित्र B)। इन्हें **सर्वसूत्री कशाभ (pantonematic flagellum)** भी कहते हैं।

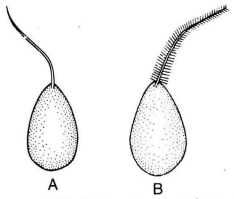

चित्र A-B. कशाभिकाएँ (Flagella) : A. प्रतोद कशाभिका (whiplash flagellum), B. कूर्च कशाभिका (tinsel flagellum)।

(11) अधिकांश कवकों में कवकजाल (mycelium) के विभिन्न कवकतन्तु (hyphae) अक्रिस्टलीय फेल्ट सदृश्य समूह में रहते हैं, परन्तु कुछ प्रगत वर्गों के कवकों के जीवन-चक्र न की कुछ प्रवस्थाओं में कवकतन्तु रूपान्तरित होकर निम्न या प्रकार की संरचनाएँ बनाते हैं

(i) दीर्घऊतक (prosenchyma)—जब अनेक कवकतन्तु परस्पर समानान्तर क्रम में शिथिल रूप से इस प्रकार व्यवस्थित हों कि कवकतन्तुओं का व्यष्टित्व (individuality) बना रहे तो यह कवक तन्तु ऊतक दीर्घऊतक कहलाता है (चित्र A)।

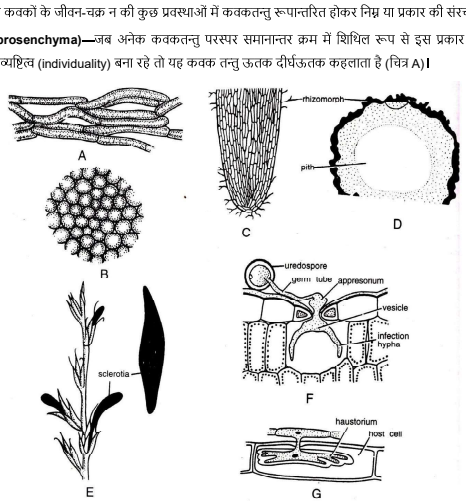

चित्र A-G. कवक तन्तुओं के रूपान्तरण (Modifications) : A. दीर्घऊतक (prosenchyma), B. आभासी पैरेन्काइमा (pseudoparenchyma), C-D. तन्तुजटा (rhizomorph), E. स्क्लेरोशियम (sclerotium), F. आसंगांग (appressorium), G. चूषकांग (haustorium)।

(ii) आभासी पैरेन्काइमा (pseudoparenchyma) — इसमें कवकतन्तु आपस में उलझ कर एक संहत ऊतक बनाते हैं। इस ऊतक में कवकतन्तु इतने जटिल रूप से व्यवस्थित होते हैं कि उनका व्यष्टित्व (individuality) समाप्त हो जाता है। अनुप्रस्थ परिच्छेद में आभासी पैरेन्काइमा उच्च पौधों के पैरेन्काइमा के समान दिखाई देता है (चित्र B)।

(iii) तन्तुजटा (rhizomorph)—जब अनेक कवकतन्तु दृढ़-बद्ध रूप से व्यवस्थित होकर जड़ सदृश्य संरचना बनाते हैं तो इसे तन्तुजटा कहते हैं। तन्तुजटा के सभी कवकतन्तु एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं जिसके कारण तन्तुओं का व्यष्टित्व समाप्त हो जाता है (चित्र C, D)। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अकेले कवकतन्तु की अपेक्षा तन्तुजटा में संक्रमण की क्षमता अधिक होती है।

(iv) स्क्ले रोशियम (sclerotium)—यह कवकतन्तुओं की गोल, चपटी, दृढ़ व आभासी पैरेन्काइमी संरचना है जो कवक की विश्रान्ति प्रावस्था (resting stage) को प्रदर्शित करती है (चित्र E)। इसमें मॉनीटाल, ग्लाइकोजन, लिपिड, आदि खाद्य पदार्थ संचित रहते हैं तथा ये प्रतिकूल परिस्थितियों में सुप्त अवस्था में रहते हैं। अनुकूल परिस्थिति आने पर ये अंकुरित होकर नया कवकजाल बनाते हैं। अनेक परजीवी कवकों में उपयुक्त परपोषी उपलब्ध न होने तक ये विरस्थायी अंग (perennating organ) के रूप में कार्य करते हैं। इनका आमाप कुछ मिलीमीटर से लेकर 20 सेमी तक हो सकता है।

(v) आसंगांग (appressorium)—परजीवी कवक की अनेक जातियों (जैसे पक्सीनिया, प्लाज्मोपारा) के कवकतन्तु जिस बिन्दु से परपोषी के सम्पर्क में आते हैं, उस स्थान पर एक सूक्ष्म गोलाकार संरचना बनाते हैं, इसे आसंगांग कहते हैं। यह कवक को परपोषी से चिपकने में सहायता करता है (चित्र F)।

(vi) चूषकांग (haustoria)—अविकल्पी परजीवियों में पोषक कोशिकाओं से भोजन ग्रहण करने के लिए कवकतन्तु विशेष प्रकार के अंतरकोशिक (intracellular) संरचनाएँ बनाते हैं जिन्हें चूषकांग कहते हैं। ये गठीले, गोलाकार अथवा मूलाभास सदृश्य होते हैं। ये कुछ विशेष प्रकार के एन्जाइम स्रवित करते हैं जो पोषक कोशिका के प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट्स का अपघटन करते हैं।

(vii) कवकतन्तु पाश (hyphal traps, snare) - परभक्षी कवक (predacious fungi) विपविपे कवकतन्तु अथवा कवकतन्तुओं के लूप का एक जाल विकसित कर लेते हैं जिन्हें **कवकतन्तु पाश (hyphal traps)** कहते **हैं। ये निमैटोडो (nematodes) के पकड़ने में सहायक होते हैं।**

(viii) स्ट्रोमेटा (stromata) ये गद्दे-सदृश्य संहत् कायिक संरचनायें हैं। इन पर प्रायः **फलन संरचनायें** (fructifications) विकसित होती हैं।

(12) कवक परपोषित (heterotrophic) होते हैं। **<u>पोषण के आधार पर इन्हें निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है</u>**

(i) परजीवी (parasites)—ऐसे कवक जो अपना पोषण जीवित कोशिकाओं (पादप अथवा जन्तु कोशिका) से प्राप्त करते हैं, परजीवी कहलाते हैं। ऐसे परजीवी कवक जिनके पोषण के लिए जीवित जीवद्रव्यक अनिवार्य हो, **अविकल्पी परजीवी (obligate parasite)** कहलाते हैं, जैसे रेवीनेलिया (Ravenelia), पक्सीनिया (Puccinia), आदि। इसके अतिरिक्त आस्टीलेगो (Ustilago), स्फेसिलोथिका (Sphacelotheca), टोलीपोस्पोरियम (Tolyposporium), आदि कुछ ऐसे परजीवी कवक हैं जो जीवित परपोषी की अनुपस्थिति में मृत कार्बनिक पदार्थों में उग सकते हैं। ये **विकल्पी मृतजीवी (facultative saprophytes)** कहलाते हैं।

(ii) मृतजीवी (saprophytes)—ये कवक मृत जीवद्रव्यक अर्थात् अजीवित कार्बनिक पदार्थों में पाये जाते हैं। ऐसे कवक जीवित पौधों अथवा प्राणियों को संक्रमित नहीं करते हैं। म्यूकर म्यूसीडो (Mucor mucedo), आदि कुछ ऐसे मृतजीवी कवक हैं जो अपना भोजन केवल मृत कार्बनिक पदार्थ से ही ग्रहण करते हैं। इनमें जीवित पौधों अथवा प्राणियों को संक्रमित करने की क्षमता नहीं होती है। इन्हें **अविकल्पी मृतजीवी (obligate saprophytes)** कहते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे मृतजीवी कवक भी हैं जिनमें जीवित पौधों व प्राणियों को संक्रमित करने की क्षमता होती है, इन्हें **विकल्पी परजीवी (facultative parasite)** कहते हैं। उदाहरण—फ्यूजेरियम (Fusarium),

पिथियम (Pythium), इत्यादि। (iii) सहजीवी (symbionts)—कुछ कवक दूसरे जीवित पौधों अथवा प्राणियों में उगते हैं तथा दोनों एक-दूसरे के लिये परस्पर लाभकारी होते हैं। इस प्रकार का सहवास सहजीविता (symbiosis) कहलाता है। लाइकेन (lichen) तथा कवकमूल (mycorrhiza) सहजीविता के सामान्य उदाहरण हैं। लाइकेन शैवाल और कवकों से मिलकर बने होते हैं। इनमें से शैवाल प्रकाशसंश्लेषण द्वारा कार्बनिक पदार्थ बनाता है तथा खनिज तत्वों को कवक से प्राप्त करता है, जबकि शैवाल का कार्य कवकों को कार्बनिक पदार्थ उपलब्ध कराना है। इसी प्रकार कवकमूल में भी परपोषी व कवक एक दूसरे के लिए लाभकारी होते हैं। इनमें कवक परपोषी पौधे की खनिज लवणों को अवशोषित करने की क्षमता बढ़ाते हैं और इसके बदले में परपोषी कवक को आवश्यक खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराता है।

(13) कुछ एककोशिकीय कवकों को छोड़कर अधिकांश वंशों में **कायिक कवकजाल** (vegetative mycelium) का केवल एक भाग ही जनन इकाई बनाता है तथा शेष कवकजाल कायिक रहता है। ऐसे कवक **अंशकायफलिक (eucarpic)** कहलाते हैं। एककोशिकीय वंशों में प्रायः सम्पूर्ण कायिक कोशिका जनन इकाई में परिवर्तित हो जाती है। इन्हें **पूर्णकायफलिक (holocarpic)** कहते हैं।

(14) कवकों में जनन कायिक (vegetative), अलैंगिक (asexual) तथा लैंगिक (sexual) विधियों से होता है।

(15) कायिक जनन (i) खण्डन (fragmentation; उदाहरण Rhizopus, Mucor, Aspergillus, Alternaria), (ii) कोनिडिया (conidia; उदाहरण—Penicillium, Aspergillus, Albugo), (iii) विखण्डन (fission; उदाहरण—Yeast), तथा (iv) मुकुलन (budding; उदाहरण—Yeast, Ustilago) द्वारा होता है।

(16) लगभग 20% कवकों में प्रवर्धन केवल अलैंगिक विधियों से होता है। अलैंगिक जनन प्रायः अनुकूल परिस्थितियों में अनेक प्रकार के कोनिडिया (conidia) अथवा बीजाणुओं (spores) द्वारा होता है। बीजाणु एककोशिक (उदाहरण-Aspergillus, Penicillium) अथवा बहुकोशिक (उदाहरण-Alternaria, Cercospora) होते हैं।

(17) अनेक कवकों (जैसे म्यूकर, ऐक्लिया) में बीजाणुओं का उत्पादन कोष अथवा थैलीनुमा (sac-like) संरचना में होता है जिसे, **बीजाणुधानी (sporangium)** कहते हैं। बीजाणुधानी धारण करने वाले ऊर्ध्व (erect) कवकतन्तु को बीजाणुधानीधर (sporangiophore) कहते हैं (चित्र A)।

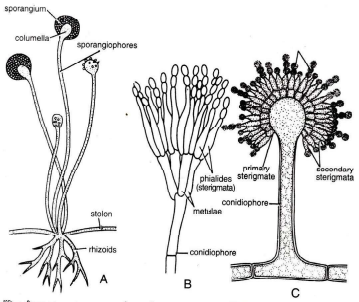

चित्र A-C. अलैंगिक बीजाणु (Asexual spores) : A. बीजाणुधानी (sporangium), B-C. कोनिडियमधर (conidiophores); B. *पेनिसिलियम (Penicillium)*, C. *ऐस्पर्जिलस (Aspergillus)*।